मानव मन्दिर

मई-जून- 2020 (वर्ष-47 अंक 03-04)

विश्व में मानव-मात्र के सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक कल्याण और विकास की सेवा में संलग्न पत्रिका

संस्थापक :

परमसन्त परमदयाल पं फ़कीर चन्द जी महाराज

दयाल कमल जी महाराज
09418370397

प्रबन्धक सम्पादक
श्री ब्रह्मशंकर जिम्पा

प्रकाशक
श्री राणा रणबीर सिंह
(जनरल सैक्रेटरी)

अनुक्रमणिका

1. आरती- 04
2. हजूर दाता दयाल जी महाराज - मुर्शिदपरस्ती (गुरुभक्ति) - 07
3. हजूर परमदयाल जी महाराज:
   प्रकृति की बैलेंस - 15, सुमिरन-ध्यान-भजन - 34,
   पूर्ण धनी कौन? - 45
4. हजूर मानव दयाल जी महाराज :
   शब्द पाठ - 66
5. शोक सन्देश
6. दानी सज्जनों की सूची - 88

संपादक एवं ट्रस्ट अपनी पूर्व सन्त-परम्परा के विचारों के प्रति समर्पित है।
शेष आचार्यों के विचार उनके व्यक्तिगत हैं, उनसे सहमति अनिवार्य नहीं।

Faqir Library Charitable Trust (Regd.)
Manavta Mandir, Manavta Mandir Road,
Hoshiarpur-146001 (Pb) Ph: 01882 243154
email: manavmandir68@gmail.com
web: www.manavtamandirhsp.com
facebook.com/manavtamandirhsp

आरती

राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी॥
अलख अगम और अनामी॥
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी॥
परम सन्त का रूप धरा, जीवों पर उपकार किया॥
सीधा सच्चा मार्ग दिया, आये धुर पद धामी॥
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी॥
बन कर आये परम फकीर, हरने सब जीवों की पीर॥
परम दयालु दानी वीर, नाम दान के दानी॥
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी॥
राम भी हो और कृष्ण भी तुम॥
तुम महावीर और बुद्ध गौतम॥
अक्षर ब्रह्म और पुरुषोत्तम, सब नामों में अनामी॥
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी॥
मानवता का किया प्रचार, निज अनुभव का दे दिया सार॥
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी॥
दाता दयाल के प्यारे तुम, मानव के रखवारे तुम॥
निर्गुण और सगुण भी तुम, सब के अन्तर्यामी॥
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी॥

जिस धूमधाम से हम बैसाखी का पर्व मनाना चाहते थे 'कोरोना महामारी' की वजह से मना नहीं पाए। इंसान अपने-आपको प्रकृति से बड़ा समझने लगता है, प्रकृति समय-समय पर उसे अपनी औकात दिखा देती है। विगत् 400 सालों में हरेक सौ साल के अंतराल पर जानलेवा महामारियों ने अपना तांडव विश्व को दिखलाया है। जिसका उदाहरण 1720 में यूरोप में प्लेग, 1820 में एशिया में हैजा (कॉलरा), 1920 में यूरोप में स्पैनिश फ्लू (दिमागी बुखार) और अब 2020 में कोरोना का आतंक सारी पृथ्वी पर फैल चुका है। सारा ब्रह्मांड आंतकित है। पर इस संकट की घड़ी में भी परमदयाल जी महाराज के सत्संगियों पर कोई आँच आने की सूचना नहीं मिली है। सभी सत्संगियों पर उनकी कृपा बनी रहे, ऐसी प्रभु चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

इस मुसीबत की घड़ी में हमारे सत्संगी भाईयों ने हमारे साथ कंघे से कंघा मिलाकर साथ दिया। जिनमें मुम्बई के सत्संगियों ने और अमेरिका से राहुल भटनागर और उनके परिवार वालों ने, परमदयाल जी महाराज की पोती रानू जंग और डॉ. अगम ने बड़ा योगदान कोरोना बीमारी में फंसे लोगों में राशन वितरण हेतु दिया। हम उनके इस योगदान के लिए अपनी ट्रस्ट की तरफ से तहेदिल से उनका शुक्रिया अदा करते हैं तथा साधुवाद करते हैं। सभी सहयोगी सत्संगियों की सूची हम अन्तिम पृष्ठ पर छाप रहे हैं।

राहुल भटनागर परिवार ने नर्सरी से दसवीं तक के विद्यार्थियों के लिए फ्री यूनिफार्म और नर्सरी से दूसरी तक के बच्चों के लिए मुफ्त किताबें अपने परिवार की ओर से शिवदेव राव एस.एस.के हाई स्कूल के विद्यार्थियों को अनुदान स्वरूप एक बड़ी धनराशि मानवता मन्दिर को भेजी। हम उनका तहेदिल से धन्यवाद करते हैं।

कोविड-19 की वजह से मार्च-अप्रैल की पत्रिका मानवता मन्दिर आप तक देर से पहुँची इसके लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं।

हमारे ट्रस्टी श्री अनुराग सूद जी की माता श्रद्धेय संतोष सूद की अकाल मृत्यु हो गई। फकीर लाईब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट परमदयाल जी महाराज के चरणों में प्रार्थना करता है कि महाराज उन्हें ये कष्ट सहने का बल बख्शें, परिवार के सिर पर अपना हाथ रखें। मृतक आत्मा को अपने चरणों में वास दें।

गुरु पूर्णिमा का पर्व 5 जुलाई, 2020 को आ रहा है। परमदयाल जी महाराज से करबद्ध प्रार्थना है कि दुनिया का माहौल ठीक हो और कोरोना का विनाश हो और गुरु पूर्णिमा के शुभ अवसर पर वैसाखी जितनी संख्या में सत्संगियों की सेवा का अवसर हमें मिले। आपकी आमद की बेसब्री से पूरा फकीर लाईब्रेरी चैरिटेबल ट्रस्ट इन्तजार कर रहा है।

हमारा ट्रस्ट दयाल कमल जी महाराज के आशीर्वाद, आचार्य श्री ब्रह्मशंकर जिम्पा जी के सफल नेतृत्व , आचार्य कुलदीप शर्मा जी, आचार्य अरविन्द पराशर जी के दिशा निर्देशों एवं सभी ट्रस्टी भाईयों के सहयोग से दिन-रात आपकी सेवा में तत्पर—

आपका दास

सचिव

राणा रणवीर सिंह

मानवता मन्दिर, होशियारपुर

फोन:- 09463115977

मुर्शिदपरस्ती (गुरुभक्ति)

दाता दयाल जी महाराज

राधास्वामी धाम, 14.6.1930

गुरु गुरु मैं हिरदै धरती।

गुरु आरत का सामाँ करती।

जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसा हाल वैसा काल (बातचीत) अगर मनुष्य के अन्दर वहम भरे हुए हैं तो उसके ख्यालात भी वहमी, उसके हालात भी वहमी और उसकी बातचीत भी वहमी होगी। अगर इन्सान के दिमाग में कोई बात बैठ गई है तो उसके हालात, ख्यालात और बातचीत उसी के मुताबिक हो। मनुष्यों की काफी संख्या वहमपरस्त है। जिस चीज़ को आँख से नहीं देखा उसके विश्वास को पक्का करने का ख्याल हमेशा दिल में रहता है। चूंकि देखा नहीं, समझा नहीं और बूझा नहीं इसलिए ऐसे कमजोर और झूठे विश्वास का दिल के ख्यालात में हर दर्जे का डर बना रहेगा। ऐसे आदमी का मुर्शिदपरस्त होना बहुत मुश्किल है क्योंकि उसके अन्दर कमजोरी और कमी है जो किसी तरीके से दूर नहीं की जा सकती। चोर मकान के अन्दर घुसा हुआ है चोर अन्दर दाखिल होने का ख्याल पहले ही उसके अन्दर मौजूद है। इसके वास्ते वो बेशक लाखों बातें बनाये

परन्तु वो तो बातें ही बनाता रहेगा और चोर अन्दर ही अन्दर चोरी करता रहेगा। इसलिए सन्तों ने बगैर किसी डर और खौफ के यह ऐलान किया:-

आदमी रा बचश्मे हार निगर,

अज़ ख्याले परी वा जां बिगुज़र।

अर्थ- जिन्न और परी के वहम को छोड़ो और आदमी को उसके हाल की नज़र से देखो।

कहने का तात्पर्य यह है कि सन्तों और फकीरों ने फर्ज़ी और वहमी माबूद (ईश्वर) का ख्याल दिल से हटा दिया और अपनी ख्याली निगाह के सामने कामिल पुरुष के विश्वास को बतौर इष्ट के कायम किया। इसी कामिल पुरुष को गुरु बोलते हैं।

यह कामिल पुरुष न ईश्वर है न परमेश्वर है, न ऋषि है न मुनि है, न ब्रह्मा है न विष्णु है और न शिव है। अगर ये सब नाम ज़िन्दा हस्तियों के हैं तो उनको नमस्कार परन्तु इनमें से कोई भी गुरु की बराबरी नहीं कर सकता। अगर ये हैं या अगर ये नहीं हैं तो इनके होने या न होने से हमको बहैसियत इन्सान कुछ लेना-देना नहीं। अगर हम जबरदस्ती इसके वहम में पड़ते हैं तो सिवाय इसके कि हम अपना नुकसान करें और कोई फायदा इनसे नहीं होता।

अगर ये नहीं हैं तो नहीं के पीछे हमको जाने की कोई जरूरत नहीं है। और अगर ये हैं तो उनकी हस्ती की बुनियाद गुरु के मातहत

है। इसका मतलब यह है कि इन तमाम ईश्वर, परमेश्वर, ब्रह्मा, विष्णु और महेश को पैदा करने वाली गुरु की जात है। मगर गुरु न होता तो फिर कौन शख़्स इनके वजूद या इनके मौजूद होने का सबूत देता। इनकी हस्ती गुरु की जुबानी सुनी जाती है यानि गुरु अपनी जुबान से इनको पैदा करता है इसलिए वह इन सबका पैदा करने वाला है।

अब बताओ गुरु से बढ़कर हम और किसको जानें? गुरु की हस्ती और किसी अकली दलील या फरमान की मोहताज नहीं है और ये तमाम ख्याली हस्तियाँ गुरु की हस्ती के अधीन हैं इस वास्ते गुरु की पवित्र हस्ती इन सबसे ऊपर है। किसी ने सच कहा है-

गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागूँ पाय।
बलिहारी गुरुदेव की गोविन्द दिया मिलाय।

स्तुति गोविन्द की नहीं है स्तुति गुरु की है यानि गुरु ने गोविन्द को पैदा करके दिखा दिया।

सतपुरुष या गुरु का ख्याल आसान से आसान और मुश्किल से मुश्किल है। आसान इस वजह है कि हम अपनी इन जाहिरी आँखों से गुरु के दर्शन करते हैं उसके कलाम को सुनते हैं। उसके कलाम या सत्संग की वजह से हमारी ख्याली आंखों के सामने जमीन और आसमान के सभी लोक लोकान्तर आ जाते हैं।

गुरु है- गुरु की हस्ती को साबित करने के लिए किसी सबूत की जरूरत नहीं इस ख्याल से यह आसान है और मुश्किल इस कारण

से है कि आदमी कामिल पुरुष की जात से नफरत करता हुआ अपने आपको हद दर्जे का हकीर और जलील साबित करता है। उसको बार-बार समझाया गया कि इन्सान सारी सृष्टि में उत्तम है परन्तु वहम में पड़कर उसने अपनी शराफ़त को जवाब दे दिया और अपने आपको ऐसी हस्तियों के सामने मोहताज और बेइज्जत बनाया जिनको उसने कभी अपनी आँखों से भी नहीं देखा और वहम में पड़कर हमेशा जलील और बेइज्जत होता रहा। आखिर परिणाम यह हुआ कि बगैर जरूरत के अपना नाम 'बन्दा' रखा और बन्दगी की जंजीर अपनी गर्दन में डाली और गिरते-गिरते यहाँ तक गिर गया कि अब आगे गिरने की हद नहीं रही। क्या था और क्या बन गया। जो चीज़ अपनी हैसियत से गिर जाती है वह हमेशा गिरती ही चली जाती है और अपनी इज्जत को हमेशा के लिए खो देती है। इसी वास्ते ऊपर दिये गये दोहे में फारसी के कवि ने बिलकुल सच्ची बात कही है कि मियाँ तुम परी और जिन्न के ख्याल में क्यों पड़े हो इन्सान को इन्सान की नजर से क्यों नहीं देखते।

दूसरी बात यह है जिन पिछलों को तुमने कभी अपनी आँखों से नहीं देखा उनकी टेक क्यों बांधते हो? उनके वहम का सौदा क्यों पकाते हो? इस टेक बांधने का भी वही नतीजा होता है जो वहमपरस्तों का होता है।

अगर किसी जमाने में कोई बुजुर्ग गुरु हुआ तो क्या और नहीं हुआ तो क्या उससे तुमको क्या और हमको क्या। वह जमाना लद

गया जब खलील खाँ फ़ाख्ता उड़ाया करते थे। धन्वन्तरी गुजर गया अब वह तुम्हारे फोड़े को चीरने के लिए नहीं आयेगा। अगर फोड़े में अब नश्तर लगाना हो तो इस वक्त जो डाक्टर मौजूद है उसके पास जाओ तब काम बनेगा और अगर धन्वन्तरी-धन्वन्तरी करते हो तो जाओ हवा खाओ तुम जानो और तुम्हारा फोड़ा जाने।

तीसरी बात यह है कि इन्सान मौजूदा इन्सान से ही फायदा उठा सकता है जो मर चुके हैं उनसे नहीं। आपका काम जब भी बनेगा किसी मौजूदा इन्सान से ही बनेगा। मोहब्बत का दम अगर भरा जायेगा तो उसी से भरा जायेगा:-

इष्ट का बन्दा हुआ है छोड़ सारे कीलों काल।

माजी मुस्तकबिल नहीं वह हाल का कुछ कर ख्याल॥

सुनने में ये बातें आश्चर्यजनक है- मैं उस मुर्शिद का मुरीद हूँ जो आज से सौ वर्ष पहले दुनिया में कमाल का डंका बजा गया। मैं उस माशूक का आशीक हूँ जो चार सौ वर्ष हुए हसीनों में सबसे हसीन था। देखो यह नादान कैसी बेतुकी हाँक रहा है। पीरी और मुरीदी इस वक्त का सौदा है या गुजरे हुए समय या आगे आने वाले समय का? और हुस्न और इश्क इस समय का जज्बा है या गुजरे हुए समय का?

चौथी बात यह है कि जिसका राज उसकी दुहाई, जिसकी हकूमत उसी का सिक्का। यही बात है जो नादानों की समझ में नहीं आती। कौन इनसे डरे और कौन इनसे झगड़े। कहने वाला कह गया:-

सतयुग त्रेता द्वापर बीता।

काहू न जानी शब्द की रीता॥

कलियुग में स्वामी दया विचारी।

परगट करके शब्द पुकारी॥

जीव काज स्वामी जग में आये।

भव सागर से पार लगाये॥

तीन छोड़ चौथा पद दीन्हा।

सतनाम सतगुरु गति चीन्हा॥

एक आदमी मच्छ, कच्छ, वराह और नरसिंह का नाम लेकर दुआएँ माँग रहा था, दूसरा आदमी वामन, परशुराम और राम के नाम की दुहाई दे रहा था और तीसरा कृष्ण-कृष्ण और बुद्ध-बुद्ध चिल्ला रहा था। एक समझदार इन्सान ने तीनों की बात सुनी। उनसे पूछा कि तुम यह क्या कर रहे हो? पहले आदमी ने कहा कि मैं सतयुगी भगवान् का नाम लेता हूँ। दूसरे ने कहा मैं त्रेता के इष्ट-देवताओं की आराधना कर रहा हूँ। तीसरे ने कहा मैं द्वापर के अवतारों के नाम का चिराग़ जलाता रहता हूँ। वह हँसा और बोला- तुम बड़े सौदाई हो। पुराने राजाओं का क्या नाम लेते हो इस ज़माने के राजाओं के नाम लो तो तुम्हारा कुछ काम भी बने। यह तुम्हारी सख्त गलती है और इसका कोई लाभ नहीं। उन्होंने कहा- तू कहीं का बड़ा अक्लमन्द आया है तुम तेरी बात मानें या अपने शास्त्रों की। वह हँसा और कहने लगा-

अपने शास्त्रों की बात मानी वो कह गये हैं:-

ध्यान प्रथम जुग मख जुग दूजे।

द्वापर परितोषित प्रभु पूजे॥

कलि केवल इक नाम आधारा।

श्रुति स्मृति सन्तमत सारा॥

अर्थ- सतयुग का ध्यान, त्रेता का यज्ञ, द्वापर का मूर्तिपूजा और कलियुग में नाम- यही नाम श्रुति और स्मृति सब का सार है । कहने वाला कह गया है-

लीक पुरानी छोड़ तेरे भले की कहूँ।

टेक पक्ष गुरु बांध तेरे भले की कहूँ॥

पिछलों की तज टेक तेरे भले की कहूँ।

वक्त गुरु को मान तेरे भले की कहूँ॥

लेकिन इसे कौन सुनता और समझता है। यह केवल सन्तों का मत है जो मुर्शिदपरस्ती के ज़रिये वास्तविकता की तरफ ले जाने का प्रबन्ध करता है।

गुरु महिमा

1. **गुरु कुम्हारा शिष्य कुम्भ है घड़ घड़ काढ़े खोट।**
   अन्तर हाथ सिहारदे बाहर दे दे चोट॥
2. **गुरु को मानुष जानते ते नर कहिये अन्ध।**
   होयँ दुखी संसार में आगे जम का फन्द॥

3. **गुरु किया है देह को सतगुरु चीन्हा नाहिं।**
   भवसागर की धार में फिर फिर गोता खाहिं॥
4. **कबीर ते नर अन्ध हैं गुरु को कहते और।**
   हरि रूठे तो ठौर है गुरु रूठे नहिं ठौर॥
5. **कबीर हरि के रूठते गुरु के शरणे जाय।**
   कहें कबीर गुरु रूठते हरि नहि होयँ सहाय॥
6. **गुरु गोविन्द दोऊ एक हैं दूजा सब आकार।**
   आपा मेटे हरि भजे तब पाले करतार॥
7. **गुरु हैं बड़े गोविन्द से मन में देख विचार।**
   हरि सिरजे ते वार हैं गुरु सिरजे ते पार॥
8. **गुरु गोविन्द दोनों खड़े का के लागूँ पाय।**
   बलिहारी गुरुदेव की गोविन्द दिया मिलाय॥

प्रकृति की बैलेंस (समतोलन)

परमसन्त

हज़ूर परम दयाल पं. फ़कीर चन्द जी महाराज

यह युग मौज आधीन बने और बिगड़े।
यह खेल सुहाना है देख देख हम बिगसे॥
राम को मिलने आये थे, राम से ऐसे मिले।
भूले खुद को साथ ही, राम को भी अब भूल रहे॥
जहाँ का अनुभव है हुआ, वहाँ परम तत्त्व रहे।
कहन, सुनन, सोचन और मनन कुछ ही न रहे॥
क्यों आये थे?

इसका उत्तर क्या हूँ? वर्तमान विज्ञानियों ने स्थूल जगत् की रिसर्च की। उन्होंने इस युग में एटम व हाइड्रोजन बम आदि को बनाया। इस समय संसार में एक नया दौर आ रहा है, किन्तु प्रकृति माता में हर वस्तु की विरुद्ध ऐन्टी वस्तु उत्पन्न होती है। हम भी इस स्थूल जगत की रिसर्च के प्रतिकूल ऐन्टी बनकर आये हैं। जहाँ स्थूल जगत की शक्तियाँ मानव जाति के हृदयों में चिंता व भय उत्पन्न कर रही हैं, वहीं हमारी मानसिक व आत्मिक धारें इस चिन्ता व भय को

जो इस स्थूल जगत् के प्राणियों की वासनाओं से उत्पन्न होती हैं ब्रह्माण्ड में फैल कर दूर करने का प्रयत्न करती रहती है। प्रकृति संतुलन बराबर रखती है। यों भी देखा जाता है कि अत्याचारी को अत्याचार करने में आनन्द मिलता है, तो दीन, दु:ख सहता हुआ भी एक प्रकार का चैन लेता है। जहाँ धनाढ्य व पदाधिकारी अपने धन व शासन का आनन्द लेता है वहाँ वह दुखी भी होता है। इसी प्रकार एक निर्धन व दास यदि निर्धनता व शासन का दुख सहन करता है, उसमें सहनशीलता व सन्तोष का भी साँख्य है।

साधु व सन्त इन संसार में इस संतुलन को स्थिर रखते हैं। वे देखने में निर्धन है। संसार में कोई आदर सम्मान नहीं, नाम नहीं, घर नहीं, घाट नहीं किन्तु वे नाम-रत्न के धन से मालामाल हैं। यह नाम जिसका उल्लेख धर्म व पन्थ करते हैं, क्या है? मनुष्य के अन्दर में सुख, शान्ति व जगत की भलाई की भावनाओं का रहना ही नाम की प्राप्ति है। राधास्वामी मत वाले अथवा अन्य नामधारी पन्थ, सम्प्रदाय मेरी इस व्याख्या पर सम्भवत: टीका-टिप्पणी करने वाले केवल वह हैं जिनको सन्तों का या पूर्णपुरुषों का सत्संग नहीं मिला है:-

नाम रहे चौथे पद माहीं, यह ढूँढें त्रिलोकी माहीं॥

इन्होंने नाम को कोई शब्द समझा हुआ है या यह नाम को अन्तरी शब्द ही मानते हैं। यदि अभ्यासी होते तो इनको स्वयं पता लगता कि बाह्य सुमिरन व आन्तरिक अनहद के आगे एक हालते हस्ती है जहाँ-

न प्रकाश न शब्द है न राम है न रहीम है।

न वहाँ 'अ' कोई न 'उ' कोई और न कोई 'म' ही है॥

न जिस्म है कोई वहाँ न कोई मन है और न वहां रूह है।

वह हालते हस्ती जिन्दगी का अन्त है और वही शुरु है॥

जीवन के अनुभव ने चूंकि मुझे निश्चय करा दिया है कि वह परमतत्त्व ही सबका आधार है इसलिए यह निश्चय रखकर अपने आपको उस दशा में परिवर्तित करता रहता हूँ कि Peace to the humanity यदि इसका कोई परिणाम श्रेष्ठतर हुआ और हमारे देश इस स्थूल जगत के विज्ञान के बुरे प्रभावों से बचा रहा तो मेरा अनुसंधान सच्चा अन्यथा गलत व झूठ। यह परीक्षण है।

रूस व अमरीका अपने बौमस् का परीक्षण करते रहते हैं। हम भी अपनी मानसिक व आत्मिक भावनाओं का परीक्षण करते हैं। बहुत से परीक्षणों में चूंकि सफलता हुई इसलिए इस बड़े भारी परीक्षण को आजमाने का विचार है। मानसिक व आत्मिक उन्नति वाले और भी बहुत से साधु सन्त होगें किन्तु जो महात्मा साधु, स्त्री, धन, मान, प्रतिष्ठा के लोभ में आ गये हैं वह असफल रहेंगे।

चाहे कोई महात्मा हो जो डेरा, धाम अथवा किसी मत-मतांतरों के पक्ष में है वह असफल रहेगा, न वह इस पद तक पहुंच सकता है चूंकि उसका विचार संसार की ओर रहता है:-

चलो चलो सब कोई कहे, बिरला पहुँचे कोय।

एक कनक अरु कामिनी, दुर्गम घाटी दोय॥

कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह।

मान बड़ाई ईर्ष्या, तजनी दुर्लभ एह॥

Peace to the humanity (मानव जाति को शान्ति मिले)

नोट:- मनुष्यता के नियमानुसार यह विचार लेखबद्ध करना नहीं चाहिए था। चूंकि मैं अब जीवन की अन्तिम अवस्था पर हूँ, न कुछ किसी से गरज न वास्ता। केवल इस विचार से कि यदि जनता को वास्तविकता, सारतत्त्व व मानसिक अथवा आत्मिक लहरों का विश्वास हो जावे तो सम्भव है कि देश का रुझान मनुष्यता या वास्तविकता की ओर हो जाये और मानव जाति को सुख, शान्ति मिल सके। इससे अधिक और कोई अभिप्राय नहीं है।

मनुष्य कौन है?

मैं किसी से गुरु और शिष्य का सम्बन्ध नहीं जोड़ता हूँ। केवल प्रेम का सम्बन्ध रखता हूँ। मेरे एक मित्र हैं जो मुझसे प्रेम करते हैं। व्यवसाय के विचार से मैंने उनको एक ट्रक मोल लेने की सम्मति दी। उन्होंने ट्रक बनवाया और उसके ऊपर 'मनुष्य बनो' का बोर्ड लगवाया। वह कहते हैं कि अनेक प्राणी प्रश्न करते हैं, 'क्या वे मनुष्य नहीं हैं?' उन्होंने मुझसे कहा, मेरे अपने मन में विचार आया कि बात सत्य है। क्या सब मनुष्य नहीं है? मैं भी मनुष्य होता हुआ मनुष्य नहीं

था। अब भी मनुष्य बनने या मनुष्य बनकर जीने का प्रयत्न करता रहता हूँ।

मनुष्य अन्य जीव-जन्तुओं की भाँति एक जीव है। समस्त जीव-जन्तु अपने मन या विचार की धार में बह जाते हैं। किन्तु मनुष्य में यह श्रेष्ठता है कि वह अपने विचार में, यदि चाहे तो बह नहीं सकता। इसलिए इस विशेष गुण के कारण यह सर्वश्रेष्ठ है। मनुष्य में सहनशीलता और विवेक, विचार का अंश प्रकृति माता ने स्वयं ही उत्पन्न किया हुआ है। जो प्राणी इससे लाभ उठाकर जी सकते हैं वह मनुष्य हैं। दूसरे मनुष्ययोनि में होते हुए भी मनुष्य नहीं है।

प्रत्येक जीव-जन्तु अपनी रूचि के खाद्य पदार्थ देखकर तुरन्त ही लालायित हो जाता है किन्तु मनुष्य में समझ-बूझ, विवेक, विचार है। वर्तमान युग में मनुष्य अपने खाद्य पदार्थ, सुख-चैन, मकान आदि के लिए जो कुछ भी कर रहा है उससे सब भली भाँति परिचित हैं।

अभी लिख रहा था कि एक व्यक्ति आया जो निर्धन है, तथा गृहस्थी है। उसके पुत्र, माता, पत्नी, भाई आदि हैं। उसकी माता अपने दूसरे पुत्र के भड़काये जाने पर उससे शत्रुता तथा मुकद्दमेबाजी कर रही है। ऐसे ही जीवन के प्रत्येक अंग में झगड़े, बखेड़े, धोखेबाजी के अतिरिक्त है ही क्या? व्यवसाय में देखो। घी, दूध, तेल, खाद्य पदार्थ इत्यादि में मिलावट। व्यापार में लोग झूठ और 420 बर्तते हैं। जहाँ जिसको अवसर मिलता है वह अपने भोजन, वस्त्र, गृहनिर्माण आदि अन्य वस्तुओं के लिए अनुचित रूप में हेराफेरी करता है। राज्य

विभागों में घूँसखोरी तथा भ्रष्टाचार व राजनीतिक पार्टियों की चालें सबको मालूम हैं। केवल धर्म, पन्थ, सम्प्रदाय, मन्दिर, मसजिद तथा गुरुद्वारों से आशा की जाती थी कि सच्चाई होगी। वहाँ सांसारिक व्यवस्थाओं से भी अधिक भ्रष्टाचार है। एक पन्थ अथवा सम्प्रदाय अपनी महानता तथा बड़प्पन के लिए क्या-क्या नहीं कर रहा है। जीव बेचारे भोले-भाले, अज्ञानी, निबल, अबल हैं। उनको हरे-हरे उद्यान दिखा-दिखा कर अपने पीछे लगाया गया है। इस दशा को देखकर वर्तमान युग में पूर्ण पुरुष, सन्त कबीर, गुरु नानक और राधास्वामी दयाल आदि प्रकट हुए और उच्च स्वरों में पुकार कर कह गये, कि 'हे प्राणी! अपने को जान। तू कौन है? मैं अपने आपको जानने में जीवन व्यतीत किया। जो समझ में आया वह यह है।

मानवीय अस्तित्व चैतन्यशक्ति का एक अंश है। सन्त इसको 'सुरत' कहते हैं और उसकी उत्पत्ति चैतन्यशक्ति से जो शब्द और प्रकाश है उससे बतलाते हैं और उसको अपने मन और विचारों पर अधिकार पाने का संकेत करते हैं और यह सत्य है। 'सुरत' का नाम 'राधा' और 'चैतन्य' के भण्डार का नाम 'शब्द' तथा 'स्वामी' वर्णन कर गये और एक मार्ग जो मनुष्य के अन्दर में है उसके ऊपर चलने की सम्मति दे गये।

कबीरपन्थी, नानकपन्थी और राधास्वामीपन्थी भी अपनी शिक्षा भूल गये। इन महान् पुरुषों की बात को नहीं समझा और परस्पर वैमनस्य उत्पन्न हो गया। यह धर्मों की ही त्रुटिपूर्ण समझ थी कि

विभाजन हुआ और हिन्दु, मुसलमान आपस में लड़े और मरे, कटे।

सन्तमत तथा राधास्वामी मत स्वयं गलती खा गया। इसलिए अपने ऋण और कर्त्तव्य के अन्तर्गत जो मुझ पर प्रकृति ने, दाता दयाल तथा हजूर साँवले शाह के द्वारा नियत किया, मैंने 'मनुष्य बनो' की पुकार की है। हे प्राणी! अपने आपको तू जान। 'राधा आदि सुरत का नाम। स्वामी आदि शब्द पहचान।' प्रत्येक प्राणी वही है जो सब हैं। अपने अस्तित्व को समझ कर मनुष्यता पर चलो। सन्तों ने देखा कि जन-साधारण उनकी बात का विश्वास न करेंगे तो उन्होंने साधन बताया जिससे आन्तरिक आनन्द प्राप्त हो और स्वयं प्राणी को निश्चय हो जाये कि वास्तव में वह शब्द और प्रकाश का अंश है और वह सर्वाधार जिसके नाम पर सहस्रों धर्म बने एक आश्चर्यजनक (आपा) स्व-स्वरूप है जिसको कि कोई न जान सका और न जानेगा। जो उसकी खोज में निकला वह अपनी सुरत को खो गया अर्थात् विस्मृत हो गया। इसलिए मैं यह नहीं कहता कि कोई मेरी बात माने। मेरा कर्त्तव्य था और ऋण था। अपना अनुभव वर्णन कर रहा हूँ। यदि जो कुछ भी मैं कह रहा हूँ सत्य है तो संसार स्वयं युग, समय (काल) और अपनी बुद्धि (माया) के चक्कर से दुखी होकर इधर आने को विवश होगा।

फर्ज अपना, कर्ज अपना, मेरे दाता और साँवले शाह।
निभा रहा हूँ बेखौफ होकर और होकर के बेपरवाह॥
न मेरी गरज है कुछ न है मतलब कोई मुझको।

आप ही काम है जो अर्पण करता हूँ तुमको।
संसार वालो सुनो या न सुनो मगर सुनना होगा लाजिमी।
वजुद इन्सानियत के इन्सान हरगिज न बनेगा आदमी॥

काल से मुक्ति

दयाल पत्रिका में 'कबीर योग भाग-3' के अन्तिम पृष्ठ पर यह शब्द है:-

काल करे सो आज करे, आज है तेरे साथ।
काल काल तू क्या करे, काल है काल के हाथ॥
धीरे धीरे दिन गया, ब्याज जो बढ़ता जाय।
ना हरि भजा ना ऋण भरा, काल अचानक आय॥
काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में परलै होयगी, बहुरि करेगा कब॥
काल जीव को ग्रासही, बहुत कहूँ समझाय।
कहें कबीर मैं क्या करूँ, कोई नहीं पतियाय॥
काल हमारे संग है किस जीवन की आस।
दस दिन राम सभार ले, जब लग पिंजर सास॥
चलता चक्की देखकर, दिया कबीरा बोय।
दो पाटन के बीच में, साबित रहा न कोय॥
संशय काल शरीर में, जार करे सब धूर।

काल से बाचे दास जन, जिन पर दयाल हजूर॥

मेरा जीवन इस दयाल और काल की उलझन में व्यतीत हुआ। वाणी के गोरखधन्धों ने और जीवन की गति ने अनेक प्रकार के खेल खिलाये। राधास्वामी दयाल ने कालमत और दयालमत के शब्द गढ़कर जनसाधारण को अपनी ओर आकर्षित किया। गुरु नानक देव ने काल पुरुष तथा काल पुरुष के शब्द गढ़कर अपना विचार प्रकट किया। कबीर साहिब ने भी ऐसा ही किया। दाता दयाल महर्षि शिव व्रत लाल जी महाराज ने भी मुझे इस काल के चक्र से निकलने की शिक्षा दी। एक स्थल पर मुझे आदेश देते हैं:-

काल चक्र है सहज हिंडोला, झूला अचरज न्यारा।
सब कोई झूले झूला चढ़कर, काल झुलावन हारा॥
चन्द्र सूर दोउ गगन में झूले, झूले नव लख तारे।
जीव-जन्तु पृथ्वी पर झूले, नर पशु सकल विचारे॥
राजा झूला रानी झूली, और प्रजा समुदाई।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर झूले, झूली सब दुनियाई॥
लक्ष्मी झूली दुर्गा झूली, गायत्री महारानी।
देवा झूले देवी झूली, जल-थल-अग्नी पानी॥
काल भी झूला अपने झूला, सृष्टि प्रलय कर प्यारे।
वह भी बचा न चक्र से अपने, झूला झूले सारे॥
चढ़ी पेंग तब ऊँचे आये, उतरी नीचे ठहरे।

कभी मिले तो जम घट देखा, बिछुड़ के हो गये न्यारे॥
एक दशा में नित जो बरते, कोई नज़र न आया।
पीर, पैगम्बर, कुतुब, औलिया, ऋषि मुनि सब नहिं पाया॥
पानी ऊपर भाप की सुरत, धाया गिरि कैलाशा।
बर्फ बना धारा बह निकली, नीचे किया निवासा॥
नीचे भी रहने नहीं पाया, फिर ऊँचे की आशा।
हम तो देखें खुली दृष्टि से, अचरज अजब तमाशा॥
लकड़ी जलकर कोयला हो गई, कोयला राख और माटी।
माटी माटी में नहिं ठहरी, बनी काठ और लाठी॥
विष्टा अन्न अन्न भया विष्टा, सोई सब कोई खावे।
यह प्रपंच है अद्भुत न्यारा, कोई बिरला लख पावे॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ती लीला, कभी ऐसी कभी वैसी।
यह सब काल बली की माया, कभी जैसी कभी तैसी॥
पंडित कभी अनाड़ी होते, कभी अज्ञानी ज्ञानी।
कभी जड़ मिलजुल चेतन ठहरे, कभी चेतन जड़ जानी॥
समुझत बने कथन नहिं आवे, मन बानी अलसानी।
कैसे कोई समझावे किसको, समझे कोई गुरु ज्ञानी॥
एक दशा में कोई न बरते, कभी बैठा कभी दौड़ा।
कभी थका कभी सोया लेटा, काल चक्र अति चौड़ा॥
झूले की है विचित्र कहानी, कथा वार्ता न्यारी।

नर को हम समझावन आए, सुने न बात हमारी॥

दुख सुख दुख सुख द्वंद पसारा, द्वन्द से प्यार बढ़ाया।

द्वन्द भाव से जगत रचाया, द्वन्द के फाँस फँसाया॥

मन बुद्धि और चित्त अहंकारा, सो झूले की रसरी।

दौलड़ तीलड़ चौलड़ बन कर, जीव निबल को जकड़ी॥

जकड़े माया के फंदे में, रोये और चिल्लाये।

शोर मचाए बहु बिल्लाए, छूटन विधि नहिं पाये॥

तब दयाल को दया लागी, सन्त रूप धरि आया।

राधास्वामी अचल मुकामी, शालिग्राम कहाया॥

नर शरीर में प्रकटा आकर, जीवन बहुत चेताया।

जो कोई जीव शरण में आया, अपनाकर अपनाया॥

सुन फकीर यह गुरु उपदेशा, मैं भी तुझे सुनाऊँ।

बात जो मेरी मन से माने, इस झूले से बचाऊँ॥

खेल खिलाऊँ सुगम सुहेला, सुरत शब्द मत गाऊँ।

काल हिंडोले से तू बांचे, विधि विचित्र समझाऊँ॥

कर सत्संग विवेक से गुरु का, गुरु दयाल हितकारी।

साधु बनकर साथ ले युक्ति, जा झूले के पारी॥

नर शरीर सुर दुर्लभ पाया, सत सङ्गत में आया।

तेरा दाँव पड़ा है पूरा, सोच समझ तज माया॥

अबकी चूके मौज न ऐसी, त्याग काल की आसा।

आज का साधन आज की करले, काल को होगा उदासा॥

बार बार नहिं अवसर आना, काल महा दुखदाई।

जो कोई करे काल की आसा, सो पाछे पछताई॥

राधास्वामी दया के सागर, तेरे कारन आए।

सीस चरन में उनके झुकाकर, अपना काज बनाए॥

राधास्वामी राधास्वामी. राधास्वामी गाना।

मन वचन कर्म से भक्ति कमाना, झूले बाहर आना॥

समस्त जीवन इस काल के चक्र से निकलने का प्रयत्न परिश्रम, साधन, अभ्यास, योग, ज्ञान, भक्ति, कर्म, उपासना आदि किये। इच्छा थी कि जीवन की खोज का परिणाम बता जाऊँगा, इसलिए अपने कर्मभोग या मौज के आधीन यह कार्य करता हूँ। दाता दयाल के शब्द को पढ़कर पहला प्रश्न उत्पन्न हुआ कि–

फकीर! दे बता क्या तू काल से निकल गया?

दुनिया को न कर गुमराह, सच बता गर तू निकल गया?

हाँ! निकल गया, हाँ! निकल गया, देता हूँ सत की सद

मगर वह निकलना क्या है? यही राजे असला॥

जब तक नहीं राज़ मिला था, था काल में फँसा।

राज़ मिला तब मैं काल चक्र से निकल गया॥

वह रहस्य क्या है? अहा!

हँस हँस हँस ओ बावले फकीरा।

हँस हँस हँस ओ बावले फकीरा॥

ऐ संसारी जीवो! तुममे से सहस्रों ने नामदान लिया हुआ है। मैं भी तुममें एक हूँ। काल से निकलना क्या है? सुनो! कबीर की वाणी क्या कहती है:-

संशय काल शरीर में, जारि करे सब धूर।
काल से बाचें दास जन, जिन पर दयाल हजूर॥

(प्रत्येक प्रकार के संशय, संदेह, भ्रम और अज्ञान से, चाहे वह शारीरिक हो, मानसिक अथवा आत्मिक, मुक्ति पा जाना ही काल से निकलना है।) बस! जब तक मानव एक सीमा के भीतर है वह दुख सुख, जीवन-मरण, बुराई-भलाई, पाप-पुण्य के प्रभावों से नहीं बच सकता है। भक्त, योगी, सोगी, रोगी, ध्यानी, ज्ञानी सबके सब इस काल की सीमा से नहीं निकल सके। क्यों?

भक्त का भगवान उसका मन है प्यारे दोस्तो।
योगी का योग उसका मन ही है दोस्तो॥
सोगी के सोग अपने मन का ही ख्याल है।
रोगी का रोग भी उसके कर्म का जंजाल है।
ज्ञानी का ज्ञान उसका अपना ही विचार है।
भक्त, योगी, ज्ञानी बनना अपने ही अख्त्यार है॥
इन सबसे निकलेगा वही जिस पर दयाल हजूर है।
वह हजूर कामिल पुरुष है, और कोई दूसरा न हजूर है।

बगैर मुर्शिदे कामिल, जो खुद बेवहम और बेभरम हो।
साथ ही वह अनुभव का दाता और महरमे मरम हो॥
उसकी संगत से मिटेंगे काल व माया के झमेले।
बिन पूरे गुरु के, दयाल पद से न होंगे मेले॥

अब मैं सोचता हूँ कि कैसे संसार के जीवों के भ्रमों को दूर किया जाये जब तक भ्रम, संशय, संदेह, अज्ञान प्राणी का दूर न होगा, कोई इस काल और माया से नहीं बच सकता है। दूसरे शब्दों में सुख और शान्ति को नहीं पा सकता है। चूंकि दाता दयाल ने मुझे जगत् कल्याण का कार्य दिया था। इसलिए मैंने अपने लेखों, पुस्तकों और सत्संगों में दयाल बनकर अर्थात बिना किसी मूल्य के सच्चाई, वास्तविकता और रहस्य को खोल दिया, जिससे कि मानव जाति को वास्तविकता का ज्ञान हो और वह जगत् में भ्रम और संशयरहित होकर प्रसन्नतापूर्वक जीये और दूसरों को जीने दे। इसी विचार से मैंने पुकार की है कि मनुष्य बनो। मैंने जो कुछ किया, अपनी नीयत से केवल मानव जाति को सच्चाई और वास्तविकता बताने के लिए किया। हो सकता है मैंने त्रुटि की हो। पर्दादारी को नहीं अपनाया। अब समय बदल गया है। नवीन युग प्रत्येक वस्तु को स्पष्ट देखना और सोचना चाहता है।

न ख्वाहिश है कोई सुने, न ख्वाहिश है कोई न सुने।
आए थे संसार में हम, बात सच्ची हैं कह चले॥

खुश रहो फानी जहाँ के दोस्तो, हो तुम्हारा सबका भला।
जिन्दगी के वहम सारे मिटाकर, हम तो अपने घर चले॥

संशय सन्देह, भ्रम और अज्ञान का मिट जाना ही काल से परे होना है। जो अनुभव हुआ वह कर्मभोग वश बता दिया। यह साधन अभ्यास, सुरत-शब्द योग आदि मनुष्य की सुरत को एकत्रित करने के लिए है, चरम (अन्तिम) लक्ष्य नहीं है। चरम लक्ष्य प्रत्येक के संशय, भ्रम, सन्देह और अज्ञान को दूर करना है। वह जब दूर होंगे, किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग से होंगे, वह भी उनके जो लोग अभिलाषा रखते हों कि हम दयाल पद को प्राप्त करें। दूसरे शब्दों में अटल सुख शान्ति की प्रबल इच्छा रखते हों।

पूर्ण बनने का सरल मार्ग

विवश हो रहा हूँ कि कुछ कह जाऊँ जग को। क्या? विद्वान् नहीं हूँ, वक्ता अथवा सम्पादक नहीं हूँ। मेरे टूटे-फूटे शब्दों के मर्म को समझो। आज न समझोगे तो कल को विवश इस ओर आना पड़ेगा। कैसे? जैसे प्रत्येक जीवन के लिए मृत्यु अनिवार्य है, क्योंकि हम सब किसी पूर्ण शक्ति से निकले हैं और उसी में समाविष्ट (लीन) हो जायेंगे। पूर्णता में वापिस ले जाने वाला सतगुरु पूर्ण ज्ञान है, सार अनुभव है अथवा सार शब्द की पहचान है।

कुछ दिन हुए मैं अमृतसर गया था। वहाँ एक सज्जन ने एक

बात कही थी और आज उसने पत्र भी लिखा है। वह बात यह थी कि मेरे वहाँ पहुंचने से 4 दिन पूर्व उसने साधनावस्था में जिसमें शरीर का ध्यान नहीं रहता है, देखा कि मैं अमृतसर गया गया हूँ और सत्संग कराया है और जो कुछ सत्संग में कहा था 4 दिन के पश्चात् जब मैं अमृतसर गया तो मैंने वही कहा जो अपने अन्दर में सुना था। इस विचार से वह मुझको पूर्ण अथवा अन्तर्यामी अथवा ऋद्धि-सिद्धि वाला समझकर विश्वास की दृष्टि से देखता है और मुझसे मिलने का इच्छुक है।

यह मेरा जीवन थोड़े दिन का है। मैं शपथपूर्वक कहता हूंकि मैं न तो उसको जानता हूं और न मुझे इस घटना का कोई ज्ञान है। फिर रहस्य क्या है?

प्रत्येक मनुष्य जो जिस प्रकार का और जितना जिससे प्रेम करता है और जैसा भाव रखता है, वह उसी के अनुसार अपने प्रीतम के आन्तरिक भाव और विचार को अपने भीतर उत्पन्न कर सकता है। चूंकि उसने बाह्य प्रभावों से मेरा ध्यान किया, इसलिए विज्ञान के नियमानुसार जो कुछ मुझको कहना था वह पहिले ही जान गया। अब संसार वालो, सोचो कि भक्त बड़ा है या भगवान या गुरु बड़ा है अथवा गुरु का दास?

यदि मनुष्य सच्चे हृदय से उस परमतत्त्व आधार मालिक से सच्चा प्रेम करता है तो क्या उसके भीतर वह समस्त शक्तियाँ जो इस ब्रह्माण्ड में विद्यमान हैं, नहीं आ सकती हैं? आ सकती हैं। केवल मन

लगाने की बात है।

ओउम् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्मपूर्णमुदच्यते।

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

यह शक्तियाँ सब में उत्पन्न होती हैं, किन्तु अज्ञान के वश संसारी आशाओं और मान-प्रतिष्ठा के कारणवश नष्ट हो जाती हैं। सन्तमत में इसलिए पूर्णता को पूर्ण पुरुष के रूप में माना गया है।

आज मैं उच्च स्वर से अपने कर्मभोग अथवा मौजाधीन वर्तमान पांथिक व धार्मिक गुरुओं व महात्माओं के चरणकमलों में सच्चे हृदय और सच्चे भाव से निवेदन करता हूँ कि वह सोचें कि वास्तविकता और सच्चाई क्या है?

यदि यह सत्यता अन्यत्र होती तो मुझे उन्मत्त बनकर तुम्हारे जैसे अज्ञानी शिष्यों से कटी-जली सुनने की आवश्यकता प्रतीत न होती। व्यास के सत्संगी 'सारी दुनिया' के सम्पादक का विरोध करते हैं कि 'फकीर' के लेखों को यह प्रकाशित न किया करे। अन्य विचार वाले महात्मा मुझे राधास्वामी मत कम समझकर मेरे लेख व प्रवचन को सुनने से मना करते हैं।

सन्तमत अथवा मानव-धर्म सबका है, सब इसमें है, किन्तु अनसमझी, अज्ञान, भ्रम और संशय जो त्रुटिपूर्ण शिक्षा का परिणाम है, उसके कारण हमारा घरेलू, सामाजिक जीवन नष्ट हो रहा है। हम दुखी हैं। प्रतिदिन के हमारे धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक

झगड़े हमारे लिए विपत्तियों का कारण बने हुए हैं।

मानव के भीतर समस्त जगत भरा पड़ा है। मनुष्य मनुष्य का मूल्य नहीं समझता है। मैं कर्मभोग अथवा मौजाधीन अपना कार्य करने को विवश हूँ।

कहता हूं ऐ इन्सान!

तू अपनी जात पहिचान तुझ में है सब कुछ भरा।

तू सब कुछ है, सब कुछ कर सकता है

इसमें नहीं है झूठ जरा।

खुदा न बन ब्रह्म न बन, तू उस पूर्णता की अंश बन।

अपने जीवन को सुख से गुजार, गुलामी को छोड़ जरा॥

तेरे मन की लगन में बड़ी शक्ति है। इस मत को एकाग्र कर और उस एकाग्रता से लाभ उठा। जिस वस्तु की तू खोज करता है, वह तेरा अपना स्वरूप है। इसकी सरल औषधि प्रेम अथवा प्रीति है, बस। किससे प्रेम? पूर्णशक्ति से प्रेम। आरम्भ में उसका रूप बना, उसका नाम रख, फिर उस नाम व रूप के सहारे तू अरूप और अनाम गति में प्रविष्ट हो जायेगा, यह मेरे जीवन का अनुभव है।

मैं न किसी को देता हूँ, न मुझमें लगाव व लपेट है।

सत्यता, वास्तविकता की शिक्षा मुझसे ले जाओ यह भेंट है॥

जात तेरी मेरी ज्ञानदाता, ज्ञान लो मुझसे अजीज।

बात समझ कर जिन्दगी गुजारो, इन्सान बनो मेरे अजीज॥

राधास्वामी नाम मेरा, मैं हूँ प्रकटा ले सार भेद॥

बिन भेद पाये ऐ इन्सान, मिटेगा नहीं यह खेद।

जीवन में उन्मत्तता थी, इच्छा थी कि मैं समझूँ कि राधास्वामी दयाल ने अथवा सन्त कबीर साहिब ने क्यों समस्त धर्मों और पंथों का खण्डन करते हुए उनको काल मत में बताया और अपना मार्ग दयाल मत या अकाल मत रखा। बात समझ गया और प्रसन्न हूँ। न लेना न देना। धार्मिक और पांथिक भ्रम समाप्त हुए।

इच्छा है कि जन-साधारण रहस्य को समझें और धार्मिक, पांथिक विरोध को त्याग मनुष्य बनकर जीवें और आन्तरिक साधन अथवा भक्ति करते हुए लोक अलोक पावें सुख धामा। एक दूसरे के काम आवें। घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, कीना और अज्ञान को दूर करें। यही कर्त्तव्य दाता ने दिया था। उनकी आज्ञा का पालन कर दिया, आगे मौज।

सुमिरन-ध्यान-भजन

परमसन्त

हजूर परम दयाल पं. फ़कीर चन्द जी महाराज

29.12.1974

मन के चिदाकाश में कोटि सूरज चन्दा उगे।

मन में गुरु रूप की मूरत निहारिये॥

तारों के दीवे बाल जोती जगाय जगमग।

आरति कर नेत्र को अन्तर उधारिये॥

मन के आकाश को थाल के समान जान।

श्रद्धा और भक्ति के मोती भराइये॥

प्रीति-प्रतीति बढ़े सुख आनन्द लहे।

ऐसी कर आरति राधास्वामी को रिझाइये॥

अनहद झनकार सुन शब्द की बहार देख।

शब्द की धार में मन को ठैराना है॥

शब्द सत चित है शब्द आनन्द है।

शब्द में लय और चिन्तन को पाना है॥

सुन्न में समाधि लगी ताड़ी अति गाढ़ी लगी।

भँवर की गुफा चढ़ सुरत को आना है॥

सतपद धाम जा धुरपद विश्राम पाय।

राधास्वामी चरन निरवान पद सुहाना है॥

जो लोग अजपा जाप करते हैं वो अपनी आत्मा से पूछें कि अजपा जाप करने से उनको क्या मिल जाता है? जो मुझे मिला मैं वह बताता हूँ। मन की सारी वृत्तियाँ संकल्प-विकल्प छोड़ जाती हैं और एक अवस्था तारी हो जाती है, जैसे नशे की हालत में इन्सान को कुछ समझ नहीं आती, न अक्ल होती है, न बुद्धि, न कोई तमीज। ऐसी एक अवस्था तारी हो जाती है। इससे ज्यादा अगर किसी को सुमिरन से मिला हो तो मुझको पता नहीं। हो सकता है ऐ भारतवासियो! कि मैंने जो कुछ समझा है वह गलत हो। मेरा कोई दावा नहीं। तुम करके देखो। हाँ, अगर तुम्हारा मन सुमिरन छोड़कर किन्हीं नज़ारों में चला जाये तो वह और बात है। फिर तो वह सुमिरन न हुआ। मेरे ख्याल में अगर ध्यान और शब्दयोग न भी हो तो सिर्फ एक सुमिरन से ही इन्सान इस अवस्था में पहुँच सकता है। वह अवस्था क्या है? अपनी हस्ती का जो अहम् है, हमारे अन्दर जो जीवन है, उसमें समता आने के बाद एक हालत-दशा आ जाती है; जैसे एक आदमी- क्या मिसाल दूं। हम छोटे बच्चे होते थे तो घुम्मर-खेलियाँ किया करते थे- चक्कर काटा करते थे- चक्कर लेना फिर बैठ जाना; उस वक्त एक खास किस्म का नशा मिला करता था। छोटी उम्र में बच्चे यह खेल खेला करते हैं।

तो सुमिरन करने का क्या फ़ायदा हुआ? जो मुझे अनुभव हुआ, मैं वह कहता हूँ। एक जो यह जो मैंने कहा। दूसरा, संसार में

रहते हुए जो कुछ भी कोई भी चाहता है, जिस वस्तु की उसे इच्छा है, उसको बारम्बार-बारम्बार अपने मन में पकाते रहने से, उसकी चाह करने से, उसकी वह कामना पूर्ण हो जाती है। दूसरा सुमिरन यह है, तो सुमिरन से क्या फायदा हुआ? एक तो जो वस्तु तुम चाहते हो उसको हर वक्त दिमाग़ में रखने से, उसकी लगातार चाह करते रहने से वह मनोकामना पूर्ण हो जाती है। दूसरे, हमारा मन जो अनेक प्रकार के वहमों में फँस कर तरह-तरह के कमज़ोर ख्याल लेकर दुखी होता रहता है या अच्छे ख्याल लेकर सुखी होता रहता है, तो सुमिरन करने से दुःख सुख की कल्पनाएँ जो हमको तकलीफ़ देती हैं वे खतम हो जाती हैं। चूंकि मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा, मैंने यह अनुभव किया। दावा किसी बात का मैं करता नहीं।

तो सुमिरन के मानी किसी की याद। किसकी याद? जिसको हम चाहते हैं; उसकी याद। मूलतत्त्व को, उस परमतत्त्व को तो वह पा सकता है जिसको उसकी चाह और ज़रूरत है। जिसको मूलतत्त्व की ज़रूरत नहीं, वह बेशक सुमिरन करता रहे और कदाचित वह अवस्था आ भी जाये मगर वह उसको पसन्द नहीं करेगा। मास्टर मोहन लाल! सुन रहा है? एक शख्स, जिसे मूलतत्त्व (आदिघर) की तलाश नहीं है, अगर सुमिरन करता है और उसका सुमिरन लग भी जाये तो उसको नींद आ जायेगी। पहला नुक्स तो उसमें यह होगा वह सो जायेगा। परमतत्त्व का सुमिरन वह है कि नींद न आये और मन सुमिरन करता हुआ बातमीज रहता हुआ उस अवस्था को हासिल

करे, चैतन्य रहता हुआ अनुभव करे। यह है सुमिरन, जो मेरी समझ में आया है।

अब मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ, 'फ़कीरचन्द, उम्र तुमने खो दी। तुमको क्या मिला?' यह एक सवाल है पुरुषोत्तमदास! जो मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ। मुझे गुरु बनने की हवस नहीं, न नाम की चाह है, न धन-दौलत की इच्छा। मैं तो जीवन में देखना चाहता था कि मेरा मालिक कहाँ है? मेरा आदि-घर कहाँ है? तो उम्र खोने के बाद मुझको क्या पता लगा? कि मैं ही नहीं रहा। बस! मेरे आदि मालिक का रूप क्या निकला? कि वहाँ मैं ही नहीं हूँ। मेरी अपनी चैतन्य अवस्था नहीं है। जिस शख्स की यह अवस्था हो जाती है जो मेरे पर आ रही है, जब मैं ही नहीं रहा, तो सुमिरन भी खतम हो गया, ध्यान भी खतम हो गया और भजन भी खतम हो गया। तुम्हारी 'मैं' ही तो सुमिरन है। तुम्हारी 'मैं' ही तो ध्यान है। तुम्हारी 'मैं' ही तो शब्द-भजन है। तुम्हारी हस्ती है तो सुमिरन करेगी, तभी ध्यान होगा, शब्द सुनोगे। जब तुम्हारी हस्ती ही खतम हो गई, फिर क्या रहा:-

चिराग़ गुल, पगड़ी गायब।

यह अवस्था अब मुझ पर तारी हो रही है। खबर नहीं यह मेरी दीवानगी है! खराबिए-दिमाग़ है!! या यह परमार्थ है!!! इसका मुझे कुछ पता नहीं। मैंने प्रण किया था पुरुषोत्तम दास, अपना अनुभव कह जाऊंगा। राधास्वामी मत की वाणियों ने, सन्तों की वाणियों ने मुझे पागल किया हुआ था। फिर मैं सोचता हूँ कि मेरी यह जो अवस्था आ

रही है, क्या यह ठीक है? हाँ! यह वो अवस्था है जो जेठ महीने में स्वामी जी ने कही है:-

नहिं ख़ालिक मख़लूक न ख़िलकत,
कर्त्ता कारन कारज न दिक्कत।
द्रष्टा दृष्टि नहिं कुछ दरसत।
वाच लक्ष नहिं पद न पदारथ॥
ज़ात सिफ़ात न अव्वल आखिर।
गुप्त न परघट बातिन ज़ाहिर॥

फिर इस सुमिरन-ध्यान-भजन करने का अंजाम क्या निकला? अपनी हस्ती को मिटा देना। कोई ऐसा कह देता है, कोई कह देता है- अपनी हस्तिए-जुज़वियत को कुल्लियत में तबदील कर देना। यह तो सुमिरन का हिसाब है। आगे दूसरी कड़ी है ध्यान की:-

मन के चिदाकाश में कोटि सूरज चन्दा उगे,
मन में गुरु की मूरत निहारिये।
तारों के दीवे बाल जोती जगाय जगमग,
आरति कर नेत्र को अन्तर उधारिये।

यह है ध्यान। जो कुछ इन्सान सुमिरन से हासिल कर सकता है, वही ध्यान से हासिल कर सकता है और वहीं शब्द-भजन से हासिल कर सकता है। पहला सुमिरन था; यह ध्यान की शक्ति है।

ध्यान में क्या होता है? तुम किसी रूप का ध्यान करते हो न! अपने अन्दर में किसी चीज़ को देखते हैं, ध्यान में कोई रूप हमारे अन्दर में आता है जिसे हम देखते हैं। यही तो ध्यान है। जो जब इन्सान ध्यान करता है तो अपने इष्ट का रूप देखेगा, नर देखेगा, ज्योति देखेगा, कोई सूरज, कोई चान्द-सितारे देखेगा। मैं अपने आप से पूछा करता हूँ- अन्दर में ये सूरज, चान्द सितारे है क्या? जिस-जिस किस्म के ग्रहों के असरात से जिसका दिमाग़ बना हुआ है, चूंकि ये सैय्यारे रोशन हैं, जब हम जिस्म को भूल कर दिमाग़ में जाते हैं तब उन्हीं सूर्य, बृहस्पति, आदि ग्रहों की रोशनी हमारे अन्दर प्रकट होती है। कोई बाहर से ये ग्रह या प्रकाश नहीं आते। मेरा ऐसा अनुभव है। चूंकि प्रण किया था अपना अनुभव कह जाऊँगा, इस वास्ते कहे जाता हूँ। कई ऐसे आदमी हैं जिनके ग्रह अच्छे नहीं होते वे लाख कोशिश सारी जिन्दगी करते रहें, उनको प्रकाश आयेगा ही नहीं। सत्संगी लोग अपनी-अपनी ज़िन्दगियों के अनुभवों को देखें। जिस-जिस किस्म के ग्रह-नक्षत्रों से जिसके जिस्मो-दिमाग़ बने हुए होते हैं, जो-जो खुराकें उसके माँ-बाप ने या अपने खुद खाई हुई है, उनके मुताबिक उसके अन्दर में प्रकाश-रोशनियाँ होंगी। जिनके ग्रह-संस्कार ठीक नहीं है बेशक 40-40 साल कोशिश करते रहें, उनको न सूरज चमकेगा, न चान्द-सितारे चमकेंगे। यह मेरा तजुर्बा कहता है। हाँ, जब ग्रह-दशा बदल जायेगा तब मुमकिन है उसके अभ्यास में खास किस्म का प्रकाश नज़र आयेगा। इसी वास्ते सन्तों ने जहाँ प्रकाश का

ध्यान करने को कहा है, वहीं गुरु स्वरूप का भी साधन बताया है। क्योंकि अगर ग्रह-दशा के कारण सूरज-चान्द न भी आयें और उसके अन्दर में गुरु स्वरूप या इष्ट का रूप भी आ जायेगा तो उसका मकसद पूरा हो जायेगा। यह है ध्यान की शक्ति और महिमा। समझ गये! कई आदमियों को ग्रह-दशा के कारण प्रकाश नहीं खुलता, चान्द-सितारे नहीं दिखते। कोई हर्ज़ नहीं। नहीं आते, न सही। गुरु स्वरूप का ध्यान करने से जब वृत्ति जम जायेगी तब उसका मक़सद पूरा हो जायेगा। क्या कहा मास्टर मोहन लाल। मैंने? आप समझे:-

तारों के दीवे बाल जोती जगाय जगमग,
आरति कर नेत्र को अन्तर उघारिये।
मन के आकाश को थाल के समान जान,
श्रद्धा और भक्ति के मोती भराइये।
प्रीति-प्रतीति बढ़े सुख-आनन्द लहे,
ऐसी कर आरति राधास्वामी को रिझाइये।

यह है ध्यान। ध्यान की शक्ति से क्या मिलता है? आनन्द और खुशी। हमारा मक़सद तो यही है न। अगर सूरज-चान्द-सितारे नहीं आते तो न सही। मैंने आपको बताया ये क्यों- कैसे आते हैं और क्यों नहीं आते? इसकी वजह क्या है? एक तो ग्रहों का हिसाब है। जिनको जिस किस्म के ग्रह जन्म से पड़े हैं, उनको वैसी रोशनी आती है। मैंने अभ्यास में बड़े-बड़े सूरज-चान्द देखे हुए हैं, क्योंकि चन्द्र

मेरे लग्न में पड़ा हुआ है, तो मेरे अन्दर चान्द की रोशनी का होना तो लाजमी बात है। यह किसी के वश की बात नहीं। इसीलिए गुरु-स्वरूप के ध्यान की विधि बताई गई है:-

अनहद झनकार सुन शब्द की बहार देख,

शब्द की धार में मन को ठैराना है।

शब्द सत चित है शब्द आनन्द है,

शब्द में लय और चिन्तन को पाना है।

यह एक सवाल है कि सुमिरन-ध्यान-भजन करने से क्या फ़ायदा है? यह क्यों करते हैं? खुशी आनन्द और मस्ती के लिए। अगर सुमिरन, ध्यान और भजन अभ्यास करने से किसी को खुशी, आनन्द और मस्ती नहीं मिलती तो उसका सारा सुमिरन, ध्यान, भजन, अभ्यास किया हुआ बेफायदा है। जिन्दगी को सुखमय, आनन्दमय बनाने के लिए साधन किया जाता है एक। दूसरा जो मेरा तजुर्बा है, ध्यान करते हैं किसी खास ग़रज या मिशन को लेकर। चाहे दुनिया की आशाएँ हों या परमार्थ की आशा हो तो, जो किसी बगैर मकसद या मिशन के सुमिरन, ध्यान, भजन करते हैं तो वो दीवाने हो जायेंगे। उन्हें कोई फायदा नहीं होगा। हम जो भी काम करते हैं, किसी गरज़ को लेकर करते हैं न! बिना गरज़ या मकसद के यों ही सुन-सुना के, कोई काम करना कोई माने नहीं रखता। किसी मकसद को लेकर कोई आदमी सुमिरन या ध्यान करता है तो उसकी चित्त-वृत्ति एकाग्र हो जाने की वजह से उसकी इच्छा-शक्ति, कुव्वते-इरादी या will

power मजबूत हो जाती है और उसकी इच्छा लाज़मी तौर पर पूरी हो जाती है। तन्त्र वाले यही करते हैं। कई आदमी पानी में खड़े होकर ध्यान करते हैं किसी भी गरज़ को लेकर, तो उनका ध्यान बन जाता है और गरज़ पूरी हो जाती है। इस वास्ते मेरी समझ में यह आया है कि सुमिरन, ध्यान, भजन करने से पहले इन्सान को यह सोचना चाहिए कि मैं सुमिरन-ध्यान-भजन करूँ क्यों? एक तो आदमी मन की शान्ति के लिए करता है। इसके लिए है ध्यान और सुमिरन। बाकी रह गया शब्द। पहले ही मुझे पता नही था; अब मैं जानता हूँ कि सुमिरन करने वाला, जो सिर्फ सुमिरन करता है, उसको जो तत्त्व का भान या मस्ती आयेगी। वह स्थूल प्रकृति के इकट्ठा होने की वजह से आयेगी। जिस्मानी-शारीरिक आनन्द-स्थूल प्रकृति-विराट पुरुष का साधन करने से उसकी शारीरिक अवस्था में उसको लुत्फ़-आनन्द आयेगा। ध्यान करने से जो उसके मन की शक्ति है, उसमें उसे सरूर और आनन्द आयेगा। देखो न! सुमिरन करने वाले सो जाते हैं। आप करके देखो! सुमिरन करते-करते नींद आ जायेगी। तो जो नींद आ जाती है, वो बेसुध हो जाता है, उसका मतलब क्या है? उसकी शारीरिक अवस्था सुखदायी हो जाती है। जो मन के ध्यान को करते हैं, उनकी मानसिक अवस्था सुखदायी हो जाती है और जो शब्द को सुनते हैं, उनकी आत्मिक अवस्था सुखदायी हो जाती है। इस वास्ते जो सुमिरन करता हुआ शरीर को छोड़ेगा, वह विराट पुरुष में जायेगा और जो ध्यान करता हुआ शरीर छोड़ेगा, वह अव्याकृत में जायेगा,

महासुन्न में जायेगा। अब समझ गये मेरी बात को कि नहीं? यूँ समझ लो कि ध्यान की शक्ति में सुमिरन करता हुआ जो शरीर को छोड़ेगा या वहाँ लय हो जायेगा, वह अवस्था महासुन्न की है। जो शब्द में रहता हुआ अपने आप को लय करेगा, वह अपने चैतन्य आत्मा-हिरण्यगर्भ में जायेगा। इन तीनों अवस्थाओं के परे एक चौथी अवस्था और है। आदमी सुमिरन, ध्यान, भजन करता है, उसके परे एक अवस्था और आती है, जिसका इन शब्दों में ज़िक्र नहीं है यह है हमारी जात- Self की अवस्था। हम जो असल में हैं, अल्लतीफ- यानि लतीफ़ का लतीफ़ का लतीफ़- जिसको खालिस चैतन्य बोलते हैं, उस अवस्था में इन्सान चल जाता है:-

सुन्न में समाधि लगी, ताड़ी ऐसी गाढ़ी लगी;
भँवर की गुफ़ा चढ़, सुरत को आना है।
सतपद धाम जाय, धुरपद विश्राम पाय;
राधास्वामी चरन निरवान पद सुहाना है।

तो जब शब्द में लय हो जाता है तो फिर वहाँ क्या होता है? शब्द नहीं मिलते। यह हिस्से बातिन है, एहसास है, जैसे आप काम-सुख को बयान नहीं कर सकते, मिठास के स्वाद को आप ब्यान नहीं कर सकते, इसी तरह उस अवस्था के लिए कोई शब्द नहीं है। वह जुज का कुल्लियात हो जाना, या फिर मुड़ के जिस्मानी (शारीरिक) या मानसिक एहसास में न आना, अपने निजघर चले जाना:-

जो था रूप पहले, वही रूप अब भी।

इस हालत में समा जाना। मैंने यह समझा है। मेरी समझ में उसके जीवन में कोई असन्तोष, ग़म, फ़िक्र, चिन्ता, वहम, भरम आने नहीं चाहिए। मैं कोशिश करता रहता हूँ, बहुत कुछ हासिल किया। अभी सोलह आने मैं पूरा नहीं हुआ।

यह सिर्फ परमार्थ के लिए ही नहीं है; यह सांसारिक, व्यावहारिक अवस्थाओं को भी ठीक करता है, बशर्ते कि आस ठीक रखी जाये, वासना ठीक रखी जाये। सन्तों का मार्ग तो संसार से परे जाने के लिए है मगर मेरे अनुभव में यह आया है कि सांसारिक चीज़ें भी, कामनाएँ भी इससे ठीक हो सकती हैं। मुकम्मल तजवीज़ तो मेरी नहीं है, मगर किसी हद तक ठीक हो सकती है; मेरी खुद होती रहती हैं। क्या आप देखते नहीं कि कभी किसी चीज़ की जरूरत होती है, तो कुदरत कोई-न-कोई सूरत पैदा कर देती है और काम कर जाती है। यह है मेरी जिन्दगी का तजुर्बा और बस।

सबको राधास्वामी।

पूर्ण धनी कौन?

परमसन्त

हज़ूर परम दयाल पं. फ़कीर चन्द जी महाराज

राज़ कुदरत को समझने के लिए आया था मैं।

कह रहा हूँ वह जो समझ चुका हूँ मैं॥

मज़हब पन्थ, योग, विद्या के चक्कर में आ गया।

जो समझ में मेरे आया वह जगत् को कह चला॥

आज एक दुखी जीव का एक रजिस्ट्री पत्र आया। मेरे नाम के पहले परम पुरुष पूर्णधनी लिखा हुआ था। पढ़ा। आँखें बंद हो गईं। दो घण्टे पश्चात् उठा हूँ।

दाता दयाल के एक लेख का स्मरण हुआ कि आगरे में शाहजहाँ के समय में कोई मौलवी थे, विद्यार्थियों को दूर की सूझी। उन्होंने उनको शहंशाह कहकर आदर सत्कार करना प्रारम्भ किया। यहाँ तक हुआ कि वह दीवाने होकर अपने आपको शंहशाह ही समझने लगे। शासन ने उनको पकड़कर कारागार में डाल दिया। पूरा स्मरण नहीं रहा।

किन्तु राधास्वामी मत में स्वामी जी महाराज को परमपुरुष

पूर्णधनी कहा जाता है, कबीर मत में कबीर साहिब को भी ऐसे अलंकृत करते हैं। क्या ऐसे अलंकारों का कोई अधिकारी हो सकता है?

यूँ तो प्राचीन काल में, प्रजा अपनी रीति के अनुसार एक राजा के पश्चात् दूसरे को गद्दी पर बैठा कर उसको पूर्वानुसार अलंकारों से सुशोभित करती थी, इसी प्रकार एक गुरु के पश्चात् दूसरे को गद्दी पर बैठाकर उसको वही पदवी दी जाती रही। किन्तु प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि जिनको इन शब्दों से भूषित किया जाता है वह ऐसे होते भी हैं या नहीं? मेरा उत्तर है कि नहीं। केवल दूसरों की दृष्टि से यह पदवी, मान, प्रतिष्ठा के रूप में दी जाती है, जिस प्रकार कि प्राणी आप ही पत्थर की मूर्ति बनाकर उसको विष्णु अथवा शिव समझकर नमस्कार करते हैं, किन्तु परम पुरुष पूर्णधनी अवस्था है अवश्य। यह नहीं कि कोई परम पुरुष पूर्णधनी है नहीं। वह है। अब आप प्रश्न करेंगे कि वह कौन है?

वह वही है जिसने पूर्णता का इष्ट अपने अन्दर बनाया है या एक सच्चा जिज्ञासु जो इस पूर्णता का इच्छुक है, वह पूर्ण पुरुष पूर्णधनी है। यदि वह न होता तो उसके अन्दर उस पूर्णता की इच्छा ही उत्पन्न न होती।

प्राणी के भाव-विचार में पूर्णता का संकल्प बैठ जाना ही समय पर उसको पूर्ण बना देगा। अवश्य बना देगा अवश्य बना देगा।

इसीलिए वास्तविकता और सच्चा सेवक ही स्वामी है। प्रत्येक प्राणी पूर्णता का इष्ट स्थापित करके स्वयं पूर्ण हो जाता है। है तो प्रत्येक ही व्यक्ति पूर्ण, किन्तु साधन अनिवार्य है और वह साधन केवल पूर्णता के इष्ट से प्रेम करते रहना है। एक राजा अथवा राष्ट्रपति अपनी कुर्सी पर बैठकर राजा और राष्ट्रपति कहलाता है और वैसे ही कार्य करता है। इसी प्रकार एक अपूर्ण प्राणी अपने अन्दर अपने आप में पूर्णता का ध्यान बाँधकर या वहाँ बैठकर पूर्ण हो सकता है।

ऐ संसार के दुखी प्राणियों! मैं तुमको विश्वास दिलाता हूँ कि वह पूर्णपुरुष, पूर्णधनी तुम आप हो। यह दुख, क्लेश और आपत्ति इसी कारण आती हैं कि तुम पूर्णता की ओर आओ, अपने आप में पूर्णता का इष्ट बनाकर ठहरो और तुम स्वयं पूर्ण होकर अपने जीवन को शानदार और सुखी बनाकर व्यतीत कर सकोगे।

यही रहस्य बताने के लिए राधास्वामी दयाल सन्त कबीर, गुरु नानक, दाता दयाल, साँवलेशाह, वैष्णणों के ऋषि व अन्य महान पुरुष प्रकट होते रहे हैं।

सत्संग से रहस्य को समझो। भेद लो। अज्ञान, भ्रम, संशय, सन्देह दूर करो। सतगुरु इष्ट है पूर्णता का। जितना उससे अन्दर में प्रेम करोगे उतना ही लाभ होगा।

उस दुखी प्राणी को उत्तर दे दिया कि तेरा दुख अवश्य दूर होगा। विश्वास और निश्चय रख। उस परम पुरुष पूर्णधनी को अपने

अन्दर समझ।

ढूंढ उसको अपने अन्तर वह तो तेरे पास है।
वह न होशियारपुर में न वह रहता व्यास है॥
न आगरे है न उसका डेरा न धरन न आकाश है।
दाता कह गये वह हर प्राणी की अपनी सच्ची आस है।
सत्संग किसी कामिल का करके राज को लो तुम समझ।
वह यक़ीन करा देगा तुमको कि सब कुछ तुम्हारे पास है॥
अज्ञानियों और वहमियों के लिए हूँ प्रकट हुआ।
कहता हूं अनुभव अपना यह अनुभव ही सुख राशि है॥
मन की चंचलताई से मित्रो! बात समझ आती नहीं।
इसको थिर करने के लिये सुमिरन, भजन अभ्यास है॥

द्वन्द्वावस्था से बचने का उपाय

जो जैसा बनने आया कुदरत में वैसा करता है।
तमव्वज हस्ती हर एक वजूद को हरकत में रखता है॥
उसी के जेर असर यह दीवाना भी काम करता है?
अनुभव जिन्दगी को वह कागज़ लिखता रहता है॥

आज ट्रिब्यून पत्र को देख रहा था, रूस के विलैसटिक बम

के टेस्ट व अन्य देशी वृतान्तों को पढ़ा जन साधारण को बैचेनी, दौड़धूप और भविष्य में भय उत्पन्न करने वाली घटनाओं का दृश्य सामने आया जो कि पत्र में था:-

कोई वशर ऐसा नहीं जो संग दोष से बच सके।
अरू खारजी असरात असर करने से न रह सके॥

इसलिए यह विचार उत्पन्न हुआ कि संसार क्या है? संसार एक विचित्र खेल है। प्रकृति ने आश्चर्यजनक खेल खेला है:-

कोई दुखी, कोई सुखी, कोई हँसता कोई रोवता।
कोई बासेहत, कोई रोगी, कोई आनन्द है लेवता॥

इस द्वन्द्व जगत् के परे भी क्या कोई अवस्था है कि वह मानव जीवन इस त्रिगुणात्मक जगत् से ऊँचा होकर इस सुख, दुख आदि से मुक्त हो सके। शास्त्रों व सन्तों ने बहुत सी बातें कही हैं:-

किसी ने भक्ति, किसी ने योग,
किसी ने ध्यान, योग बतलाया।
किसी ने सुरत शब्द, किसी ने ज्ञान बतलाया॥
हमने यह कर करके सारे देखे कहूँ जो अज़माया।
आरज़ी यह हालतें हैं आरजी तसकीन है सबको पाया॥
तोता को जब बिल्ली ने पकड़ा भूल गया राम नाम को।
आखिर को टैं टैं ही करता रहा जब तक प्राण न गँवाया॥

किन्तु जब तक जीवन है प्राणी अपनी प्रकृति ने विवश है कि

वह दौड़धूप करे। इस दौड़धूप की जड़ में यदि कोई वस्तु कार्य करती है तो वह है वासना, इच्छा, आशा। उसका सम्बन्ध संकल्प से है। यह सत्य है कि संकल्प से परे भी कोई अवस्था है वह है प्रकाश का मण्डल। औरों के विषय में नहीं कह सकता हूँ किन्तु अपना अनुभव वर्णन करता हूँ कि अत्यन्त अभ्यासी होते हुए भी चौबीस घण्टे मेरे लिए इस अवस्था अर्थात् शब्द और प्रकाश के मण्डल में रहना कठिन है। हाँ! वहाँ रहने का प्रभाव अवश्य इस शरीर और मनके जगत् में आनन्ददायक रहता है, किन्तु जब बाह्य प्रभाव पड़ते हैं तो वृत्ति सोचने और समझने के लिए विवश हो जाती है।

इस पत्रिका के लेखों ने विवश किया कि सोचूँ कि क्या कोई उपाय इस वर्तमान युग की भयंकर परिस्थितियों से बचने का है अथवा नहीं। मेरे विचार में पहला उपाय यह है:-

मौज का ले आसरा वही इस खौफ से बचा सकता है।
मगर मौज का आसरा लेना भी नहीं कोई सस्ता है॥
काफी हो सत्संग नर को और मौज वालों से प्यार हो।
तब शायद ही कोई मौज के आधार पर रह सकता है॥

इस मौज पर केवल सच्चे साधु, महात्मा अथवा सन्त आदि की रह सकते हैं।

यद्यपि यह मौज का विचार ठीक है किन्तु है केवल निबल अबल और अज्ञानी जीवों को साहस अथवा शान्ति देने के लिए।

जिसमें शारीरिक और मानसिक बल है, संकल्प शक्ति है अथवा उपाय और विधि की शक्ति रखते हैं वह मौज आधीन रहने के नियम के अनुकूल नहीं चल सकते हैं, जब तक कि वह निबल, अबल और बेबस न हो जायें, यह मौज आधीन रहना मानव जीवन की अन्तिम बेबसी की दशा को संतोष दिलाता है।

मानव जीवन प्रारम्भ में निबल, अबल और अज्ञानी होता है और अपना बल और समझ जो जीवन की दौड़धूप में प्राप्त होते हैं वह समय के पश्चात् बदल जाती हैं। पहले भी वह जीवन न था और फिर भी वह जीवन न रहेगा। जो वस्तु अजर, अमर, अविनाशी है वह निज अवस्था है। वह शब्द और प्रकाश है उससे भी परे एक आधार मात्र है जिसके सम्बन्ध में मन, बुद्धि और विचार वर्णन नहीं कर सकते अर्थात् मूक हैं।

ऋषियों ने और मेरे अनुभव ने सिद्ध किया है कि चूंकि शब्द और प्रकाश इस रचना का उत्पादक है इसलिए यदि हम किसी वासना को लेकर अपने अन्दर प्रकाश और शब्द में लय हों तो वह इस प्रकाश और शब्द के परमाणुओं में परिवर्तन उत्पन्न कर सकता है और फिर उसका प्रभाव इस लोक में परिवर्तन ला सकता है। जिस प्रकार विशेष प्रकार का तत्त्व यदि वायु में सम्मिलित कर दिया जावे तो उस वायु का प्रभाव प्रतिकूल होगा।

सम्भवत: इसी अनुभव के आधार पर ऋषियों ने यज्ञ आदि

की प्रथा प्रचलित की हो मगर इस वास्तविकता से अनभिज्ञ होने के कारण बाह्य यज्ञ जो ब्राह्मण करते हैं उसको इस रूप में प्राणियों ने समझा हो। यज्ञ में हवनकुंड में ज्वाला को प्रज्जवलित करके आहुतियाँ दी जाती हैं।

ऐसे यज्ञ का कोई न कोई आशय होता है। इन यज्ञों में वेद मन्त्र स्वर अलाप करके आहुतियाँ दी जाती हैं। अन्तरीय यज्ञ में प्राणी की सम्पूर्ण वृत्तियाँ एकाग्र होकर शब्द सुनती हुई अपने अन्दर प्रकाश में अपनी वासना को अन्दर रखती हुई लय होती रहती हैं। इस निज अनुभव के आधार पर मेरे विचार में शान्ति का उपाय यही हो सकता है कि ब्राह्मण, साधु, सन्त और महात्मा अपने अन्दर संसार की शान्ति के लिए ऐसा अन्तरीय यज्ञ करते रहा करें। यह दूसरा उपाय है। इससे लाभ होना निश्चय है। तीसरा उपाय मेरी समझ में यह आया है कि देश के नेतागण अपनी बुद्धि को निर्मल करके अपने आपको निष्पक्ष बनाते हुए समझ-बूझ से कार्य लें और व्यर्थ का झगड़ा मोल लें। स्पष्ट शब्दों में पंचशील के नियम को अपनायें। चौथा उपाय:- देश में मनुष्यता के नियमों का स्पष्ट रूप से प्रचार हो। धर्म, सम्प्रदाय अथवा हानिकारक राजनीति को त्यागकर देश की उन्नति, भोजन, वस्त्र आदि के विचार के लिए हुए द्वितीय पंचवर्षीय योजना आदि को सफल बनाने का प्रयत्न करें। यदि हम यह मान लें कि जो कुछ होना है सो होना है जो किसी सीमा तक ठीक भी है तो यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि जिन महान् पुरुषों ने यह पुकार की है कि '**होइहै वही जो**

राम रचि राखा' वा **'कर्म गति टारें नाहिं टरै'** दुख सुख कर्मभोग है मगर उन्होंने की वर्णन किया है **'ब्रह्मवाक्यं जनार्दनम्'** सन्त ईश्वर, परमेश्वर के कर्त्ता होते हैं अर्थात् 'सन्त वचन कोई न टारे, ईश्वर, परमेश्वर सब हारे'। मेरा जीवन इसी उधेड़ बुन में व्यतीत हुआ कि यह विपरीत बातें क्यों ? इसलिए शेष जीवन के कुछ दिन इसी लगन में व्यतीत करने की चेष्टा है कि प्राणीमात्र को शान्ति मिले। और चाहता हूं कि मुझे कोई आकर न मिले। Peace to Humanity 'मनुष्य बनो' कोई मेरी निजी पत्रिका नहीं है। न कोई मैंने अपने ग्रन्थ और लेखों से धन प्राप्त किया है। दाता दयाल ने आज्ञा दी थी कि शिक्षा में शरीर त्यागने से पूर्व परिवर्तन कर जाना। जो अनुभव किया जिस बात को सच्चा माना वह कह दिया। यदि हो सका तो मनुष्य बनो के लिए लेख भेजता रहूँगा अन्यथा मौज।

सन्तों का मार्ग

सन्तों का मार्ग जीवों के कल्याण के लिए होता है। बहुधा डाक्टर औषधि देता है किन्तु औषधि का नाम नहीं बतलाता। यह रीति प्राचीन काल से चली आ रही है। अब बुद्धि का युग है। बाल की खाल निकाली जाती है। बिना विश्वास हुए कोई किसी की परवाह नहीं करता, अज्ञान से विश्वास मैं कराना नहीं चाहता। मैं इसको महान् अपराध समझता हूँ। इसलिए सन्तों और पूर्णपुरुषों को

प्रत्येक प्रकार से स्पष्ट शब्दों में वर्णन करने के लिए विवशता है। ऐ संसार के प्राणियो! तुम्हारा कल्याण तुम्हारी रहनी या क्रियात्मक साधन की शक्ति से होना है। जैसे जब तक हीलिंग (आरोग्य करने वाली) शक्ति रोगी में नहीं होगी उस समय तक कोई औषधि लाभप्रद नहीं हो सकती। वह रहनी और साधन तुम्हारा क्रियात्मक जीवन है। क्रियात्मक जीवन से तात्पर्य तुम्हारी अपनी मानसिक और आत्मिक शक्ति का निश्चय अथवा विश्वास या आस है और इस निश्चय, विश्वास और आस का बँधाना अथवा स्थापित करना और तुमको उस पर ठहराना यह मेरा कार्य है अथवा पूर्णपुरुषों का कार्य है बशर्ते कि तुम मेरी या उनकी वाणी को समझ सको।

मेरी वर्णन शैली, जिससे आप सच्चाई के अभ्यासी हो सके, प्राचीनकाल के महापुरुषों से भिन्न है। उनकी वाणी में आप सज्जनों को अथवा जनसाधारण को विश्वास, आस या अपनी आत्मिक अवस्था या उससे भी आगे ठहराने के लिए रोचक और भयानक बातें सम्मिलित थी। मेरी बाणी में प्रत्येक वस्तु के सम्बन्ध में नितान्त स्पष्टता है। यह शब्द मैं अहंकार से नहीं कह रहा हूँ। इसलिए अपने मन, वचन और कर्म पर अधिकार रखो। इनमें बह मत जाओ। मन, वचन और कर्म में बह जाने से तात्पर्य द्वैतपद से है। अपने मन्तव्य को पूर्णतया हृदयांकित कराने के लिए एक-दो नवीन उदाहरण आपके सन्मुख रखता हूँ। प्रथम उदाहरण:- जिस दिन मैं दिल्ली से लौटकर आया मेरे साथ पूज्य नन्दू भाई, श्री गिरधर सिंह हैदराबाद वाले और

श्री गोपालदास जी थे। मेरे मना करने के उपरान्त भी हजूर नन्दू भाई ने आग्रह किया कि वह मेरी धर्मपत्नी के, जिसको हजूर दाता दयाल जी महाराज ने सन् 1921 में जगत् माई का संस्कार दिया था, दर्शन करने के अभिलाषी हैं। उसी समय एक व्यक्ति सिलीगुड़ी बंगाल से उसी गाड़ी से मेरे निवास स्थान पर आया। उसने कुछ घटनाएँ वर्णन की। एक घटना यह थी कि वहाँ पानी की बाढ़ आ गई थी, परन्तु उस बाढ़ के आने से आठ दिन पूर्व उस व्यक्ति को मेरे रूप ने जिस पर वह विश्वास रखता था उसको बताया कि वहाँ से निकल जाओ पानी आवेगा। उसने दूसरों से कहा परन्तु सबने उसको पागल समझा। वह निकल गया। उसके चले जाने के पश्चात् एक भंयकर बाढ़ आई। अब मैं फ़कीरचन्द इससे नितान्त अनभिज्ञ हूँ। क्या इससे यह सिद्ध नहीं होता कि मालिक या सतगुरु या और अन्य शक्ति प्रत्येक मनुष्य के अन्दर है। जितनी मन की शुद्धताई है उतना उसको अनुभव होता है। यही बात सन्त और ऋषि कह गए कि ऐ मानव! तुझमे सब कुछ है। केवल अपने मन को शुद्ध, पवित्र और निर्मल बना ले। इसके लिए साधन और अभ्यास है।

द्वितीय उदाहरण सुनो:- सम्पूर्ण धर्म और पन्थ अज्ञान से फैले हैं यो यों समझ लो कि ये सबके सब माया और काल के अन्तर्गत हैं। झूठा प्रोपेगण्डा कराकर क्षेत्र तो बढ़ गये किन्तु जीव मन और वचन की उलझन से न निकल सके।

मैं गत वर्ष देहली गया था। वहाँ एक स्त्री को मेरे सामने लाया गया। उसने मुझसे नामदान की प्रार्थना की मैंने कहा 'माई मैं गुरु अथवा नाम दाता नहीं हूँ। मेरा वचन जो मैं कहता हूँ वह गुरु है। यदि मेरे वचन के संकेत को कोई ग्रहण कर ले और अभ्यास करे तो वह सांसारिक, मानसिक और आत्मिक रूप से सुखी हो सकता है और वचन को समझने से इस आवागमन के चक्कर से दूर हो सकता है। उसने कहा कि आज 15 दिन हुए वह किसी गुरुद्वारे में कीर्तन सुन रही थी। उस समय उसकी समाधि लग गई अर्थात् शारीरिक बोधभान को भूल गई। अन्दर में क्या देखती है कि एक महात्मा मेरे रूप का अर्थात् फकीरचन्द के रूप का प्रकट हुआ और उसने उसको कहा कि मेरी शरण आ जा। आज आपको सत्संग कराते हुए उसी रूप में देखा, इसलिए मैं आपकी शरण में आई हूँ।

सुनो संसार वालो! मैं आप्त पुरुष हूँ। संसार में मौज ने समय की आवश्यकता के अनुसार मुझे प्रकट किया है। मैं शपथपूर्वक वर्णन करता हूँ कि मैं नितान्त इस घटना से अनभिज्ञ हूँ। जब मैंने अनभिज्ञता प्रकट की तो कई मित्रों ने प्रश्न किया कि फिर यह रहस्य क्या है? मैंने उत्तर दिया कि मेरा अनुभव है कि कोई ऐसा पुरुष अथवा स्त्री है जिसकी यह प्रबल इच्छा है कि यह स्त्री मेरे केन्द्र में आ जाये। उसके विचार ब्रह्माण्ड में विद्यमान थे। जब यह स्त्री शरीर के बोधभान से ऊपर गई तो वह विचार जो उस पुरुष अथवा स्त्री के थे मेरे रूप में उसके अन्दर मेरा रूप धारण करके प्रकट हुए। इस

नियम के अनुसार यदि कोई अपना डेरा बनाना चाहे या कोई और कार्य करना चाहे और अपनी प्रबल इच्छा या विचार को फैलाये तो समान अवस्था के मस्तिष्क उसके अन्तर्गत आ जाते हैं। इस नियम का नाम है इच्छाशक्ति अथवा फिलासफी ऑफ थौट्स। मैंने इसीलिए यह इच्छा की है कि प्राणीमात्र को शांति मिले। मैं यह इच्छा नहीं करता कि प्राणी मेरे क्षेत्र में आयें। किसी धार्मिक अथवा पांथिक जगत् का मैं उत्पादक नहीं हूँ। मैं उत्पादक हूँ मनुष्यता का। इसीलिए मैं निर्भय होकर कह दिया करता हूँ कि किसी प्राणी को जो मेरे साथ प्रेम प्रीति रखता है सुख, शान्ति प्रफुल्लता, अचिन्तपना, निश्चयात्मक बुद्धि नहीं मिलती है तो मैं अपराधी हूँ वह नहीं है।

इसलिए मैंने इस दशहरे के सत्संग पर पूज्य नन्दूभाई, हजूर कृपाल सिंह व हजूर हरचरण सिंह को निमन्त्रण दिया था और मैं चाहता हूँ कि वह मेरे इन विचारों को और उन विचारों को जो जगत् कल्याण के नाम से समय पर प्रकाशित होंगे पढ़े और यथार्थ रूप से संसार का कल्याण करें कि प्राणीमात्र को शान्ति मिले। 'नानक तेरे भाने सरबत का भला।' साथ ही सत्संगी अपना-अपना और अपने परिवार का भला चाहें। यदि मैं त्रुटि पर हूँ तो मेरा खण्डन करें।

तृतीय उदाहरण:- इस दशहरे के सत्संग पर मुझे स्मरण होता है कि मैंने इस सत्य उदाहरण दिया था। वह यह था कि एक सज्जन सन्त सिंह नामक हजूर दाता दयाल के शिष्य हैं। दाता के बाह्य चोला

के अलोप होने पर उन्होंने मुझे अपने अभ्यास आदि के सम्बन्ध में लिखा। मैंने उनको उचित संकेत देकर प्रात: 5 और 7 बजे के मध्य में साधन करने के लिए कहा क्योंकि मैं स्वयं उन दिनों उस समय साधन किया करता था। यह रेडियो का नियम है। साधक तो वह पहले ही से थे किन्तु छ: मास के अन्तर्गत उन्होंने अधिक उन्नति की और यहाँ तक कि अन्तिम पद पर जाकर उनके अन्दर मलयगिरि अथवा चन्दन आदि की सुगन्ध आने लगी और सिर ठण्डा होने लगा। चूंकि मेरे साथ यह घटना हो चुकी थी मैंने उसको तार दिया कि अभ्यास बन्द करो और मुझे मिलो। वह फरीदकोट आये, देखा प्रसन्न हुआ, किन्तु मैंने कहा मित्र! यह साधन अन्तिम लक्ष्य नहीं है। अभी काल और कर्म का ऋण सर पर है सांसारिक कार्य करो, ब्रह्मचर्य का पालन करो, परन्तु वह अपनी आन्तरिक उन्नति का सेहरा मेरे सर पर थोपते थे। मैंने कहा प्रियवर! जिस प्रकार के विचार, संस्कार तुमको बाणी आदि अथवा दाता दयाल की शिक्षा से तुम्हारे अन्दर अंकित हुए थे वही साधन द्वारा तुम्हारे अन्दर प्रकट हुए। वह मानते नहीं थे।

फरीदकोट के निकट एक ग्राम है उसमें एक अपराध करने वाली जाति रहती थी। उसमें से दो-तीन प्राणी सत्संगी थे। वह मुझको एक इतवार को अपने ग्राम में ऊँट पर सवार करके ले गये। वहाँ एक साठ वर्ष का उनकी जाति का वृद्ध पुरुष था। उसने मुझे बताया कि एक कबीरपन्थी साधु ने उसको जाप के लिए एक मन्त्र बताया जिसका साधन उसने लगातार किया।

यहाँ तक उसकी अवस्था हो गई कि वह रजाई लेकर पन्द्रह दिन तक एक वृक्ष के नीचे पड़ा रहा और सुमिरन उस मन्त्र का करता रहा। रजाई के बीच में से वृक्ष और निकट का वस्तुओं को जब आँख खोलता प्रकाश रूप में पाता था। प्रकाश अन्दर मेँ अत्यन्त अधिक था। सोलह दिन जब हुए तो उसने क्या देखा कि वह एक अन्धेरे में से निकल कर एक हरे रंग के असीम समुद्र में पहुँच गया है। हरे रंग के अतिरिक्त और किसी प्रकार का प्रकाश दृष्टिगोचर नहीं होता था। वह इस दृश्य से घबरा गया और फिर साधन छोड़ दिया। उसने मुझसे प्रश्न किया कि वह कौन सी सोपान थी।?

मैंने उस सन्त सिंह से कहा भाई तुम भी बड़े अभ्यासी हो इसके प्रश्न का उत्तर दो। वह न दे सके। मैं जानता था कि वास्तविकता और रहस्य क्या है। वह प्राणी नितान्त नासमझ, विवेक और ज्ञान से रहित था। मैंने कहा मित्र! तुम वह मन्त्र पढ़कर जो तुमको उस कबीरपन्थी ने दिया था, सुनाओ। मेरे विचार में उसमें 'हरे' का शब्द अवश्य होगा। चूंकि तुमको हरे रंग का संस्कार है इसीलिए उसी संस्कार के अनुसार तुम्हारे अन्दर जो प्रकाश तुम्हारी अपनी आत्मा का है उसमें हरेपन लेकर दृष्टिगोचर हुआ है, तुमको यह साधन बिना सत्संग के वह अज्ञानी साधु दे गया था। उसने मन्त्र को सुनाया उसमें क्रमश: पाँच या सात बार 'हरे' का शब्द प्रयोग में आता था।

मैं अपने जीवन के अनुभव के आधार पर साहसपूर्वक और निर्भय होकर उच्च स्वर से पुकार करता हूँ कि जिस प्रकार का संस्कार, विचार अथवा टच मनुष्य के मस्तिष्क पर प्रभावित होता है वही साधन में दृष्टिगोचर होता है। यही कारण है कि सन्तों के मार्ग में सहस्रदल कमल से लेकर सोहंग पुरुष तक सम्पूर्ण सोपान काल और माया के अन्तर्गत है।

यदि जन साधारण इस रहस्य को जानते तो यह धार्मिक जगत् के जितने विरोध हैं वह बुद्धिमान् पुरुषों के अन्त:करण से दूर हो जाते। इसी कारण किसी पूर्ण पुरुष की संगत और उसके टच का संस्कार अनिवार्य है। इस कमी को देखकर मैंने इस सच्ची शिक्षा को जिसको सतपुरुष राधास्वामी दयाल, सन्त कबीर, नानक आदि अन्य पूर्णपुरुष दे गये अपनाकर, समझकर, साधन करके, रहस्य ज्ञाता होकर उनकी शिक्षा को प्राप्त कर इस संसार में जीवों के हित के लिए प्रकट हुआ हूँ:-

सत्संग करत बहुत दिन बीते,
अब तो छोड़ पुरानी बान।
कब लग करौ कुटिलता गुरु से,
अब तो लो गुरु को पहचान॥

सतगुरु फकीरचन्द नहीं है वरन् उसके वचन उसका संस्कार, उसकी स्वतन्त्रता और सत्यता का विचार है।

मुझे हर्ष है कि हजूर पूज्य हरचरन सिंह जी, पूज्य हजूर कृपाल सिंह जी और दयाल स्वरूप पूज्य नन्दूभाई जी मेरी वर्णनशैली के मन्तव्य को सत्यता से सहमत हैं, जैसा उनके लेख में और वचनों से सिद्ध होता है। मेरे जिम्मे में सत्यता प्रकट करने का कार्य था। मुझे न तो किसी को शिष्य बनाना है न डेरा-धाम बनाना है। मुझे निबल, अबल और अज्ञानी जीवों के लिए और जगत् कल्याण के लिए कार्य करना है। वह कर चला। यदि इन महात्माओं के अन्दर कुछ और है बाहर कुछ और है तो मैं नहीं जानता। मैं किसी के सम्बन्ध में कोई सम्मति नहीं दे सकता हूँ। अपने सम्बन्ध में कह सकता हूँ कि मुझे कोई भी निज स्वार्थ इस कार्य से नहीं है और न राधास्वामी मत का ही पक्ष करता हूँ। शेष दशहरे के अवसर पर वर्णन किये मेरे विचारों को मासिक पत्र शिव और दयाल फकीर सत्संग सभा प्रकाशित करेंगे।

अपने आपको जानो, सच्चे बनो, प्रसन्नता का जीवन व्यतीत करो, धर्म और पन्थों के जाल से निकलो।

अब रह गया प्रश्न सुरत शब्द योग का जो कि सन्तों का मार्ग है। उसके सम्बन्ध में मैंने दशहरे के अन्तिम सत्संग में कुछ निवेदन किया था वह मुझे पूरा तो याद नहीं किन्तुः-

कहता हूँ कह जाता हूँ अपने जीवन का सार।
गलत सलत का पता नहीं मेरा जीवन सत्याकार॥

एक शब्द तो वह है जो बाह्य पूर्ण पुरुष का वचन है। मनुष्य

के शारीरिक, मानसिक, वैज्ञानिक और बुद्धिगम्य जीवन को किसी पूर्ण पुरुष के वचन से शान्ति और सुख मिलना चाहिए। दूसरे शब्दों में भ्रम, संशय, सन्देह समाप्त होने चाहिए। इससे आगे अन्तरी साधन की बारी आती है। सुनो :-

यह संसार प्राकृतिक है। जहाँ तक रचना का सम्बन्ध है प्रकृति चाहे स्थूल हो, चाहे सूक्ष्म अथवा कारण, सब माया है।

गोगोचर जहाँ लग मन जाई।
सो माया कृत जानो भाई॥

हमारी पृथ्वी यद्यपि मिट्टी तत्त्व है किन्तु यह है वास्तव में सूर्य का दूसरा रूप। इसी प्रकार जितनी भी प्रकृति कारण, सूक्ष्म अथवा स्थूल है सबकी उत्पत्ति किसी ऐसे प्रकाश और शब्द से हुई है जिसको मैंने लोक-लोकान्तर का आधार समझा है। क्या पता सन्त उसको सन्तपद कहते हों। शास्त्रकार सत्यम् कहते हों। मुझे नहीं पता। मेरा अनुभव है कि प्रत्येक प्रकार की स्थूल प्रकृति जिसमें हमारी समस्त रचना विद्यमान है और सूक्ष्म प्रकृति जिसमें हमारी प्रत्येक प्रकार की वासनाएं और प्रकृति की वासनाएँ विद्यमान हैं और कारण प्रकृति जो हमारी आत्मा है सन्त या शास्त्र जिसको काल या सोहं पुरुष कहते हैं, यह निःसन्देह किसी ऐस महान् प्रकाश से प्रकट होते हैं जो अति ही निर्मल हैं। जहाँ प्रकाश है वहाँ शब्द है इसीलिए जो प्रकाश और शब्द मनुष्य अपने शारीरिक, मानसिक अथवा

आत्मिक संचालन से अपने अन्दर प्रकट करता है वह और प्रभाव रखता है।

घंटा, शंख, मृदंग, सितार, सारंगी, बांसुरी अथवा मुरली आदि के शब्द सब प्रकृति के हैं और मनुष्य की अपनी मानसिक विचारधाराओं, आशाओं, भावों की एकाग्रता के परिणाम हैं। चूंकि आत्मा, मन और शरीर के बोध-भान सब इस प्रकृति के संचालन से बनते हैं जिस प्रकार पृथ्वी व अन्य तारागण सूर्य के संचालन से उत्पन्न हुए। इसी प्रकार जिसको वर्तमान वैज्ञानिक अपनी युक्ति से इस स्थूल प्रकृति के एटम से करोड़गुणा अधिक प्रकाश और ताप उत्पन्न कर रहे हैं इसी प्रकार योगी जन अपने अन्दर अपने भावों, विचारों, आशाओं के अणु को अपने अन्दर में एकत्रित करके अपने अन्दर प्रकाश और शब्द को उत्पन्न करके अपने और दूसरों के लिए आश्चर्यजनक बातें या करामातें उत्पन्न कर सकते हैं। इसका उल्लेख हमारे प्राचीन शास्त्र करते हैं और इनको यौगिक चमत्कार भी कहते हैं, किन्तु इन साधनों से आवागमन के चक्र से मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती है। इसलिए सन्तों के मत में जिसकी मैंने परीक्षा की है सार शब्द, सार प्रकाश में लय होना है जहाँ:-

न आशा कोई न निराशा कोई, न अपना न बेगाना है।
नूर प्रकाश वहाँ पर मित्रो बहुत ही अजब सुहाना है॥
न गुरु कोई वहाँ चेला नहीं न कोई कर्त्तार सियाना है।

हस्ती आप में आप ही रहती शायद वही सत अस्थाना है॥
जो वहाँ रहता है संभवतः सन्त कोई रहता हो।
सहज आप में हस्ती रहे, न जीवन ब्रह्म निशाना है।
वाणी नहीं जो कह मैं सकूँ, कर्म भोग फकीर भुगाना है॥
गुप्त रहस्य को खोल रहा न लेना है न देना है।
जो था अब तक राज़ सीना कर दिया उसको सफ़ीना है॥

यद्यपि इससे भी आगे कुछ है किन्तु कोई समझ न सकेगा इस अवस्था के प्राप्त करने के लिए ऐसे पुरुषों के सत्संग और प्रेम की आवश्यकता है जो वहाँ रहता है।

जो नाम और धाम की आशा में है, जो काम और नाम की आशा में है उनका इष्ट या प्रेम तुमको किसी रूप में भी उस सत पद तक न ले जायेगा। मैंने इसलिए केवल वर्तमान और भविष्य में आने वाले महात्माओं को संकेत किया है:-

जीव अन्जान मरम न जाने उनको तुम बरगलाना नहीं।
दाम में अपने उनको साधुओ तुम फँसाना नहीं॥

इसलिए ऐ सच्चे जिज्ञासुओ! किसी पूर्ण पुरुष की संगत करो। तुम केवल किसी सतपुरुष के सत्संग से यदि तुमको इच्छा है तब जा सकोगे। यदि तुम में सच्चाई है, सच्ची तड़प है, तो मौज स्वयं प्रबन्ध कर देगी। सच्ची तड़प स्वयं तुमको वहाँ पहुँचा देगी। यह प्राकृतिक मार्ग है:-

प्रगटा कहने जगत् में सत्य यह नादान फकीर।
अज्ञानी जीव गालियाँ देवें कहे अभिमानी फकीर॥
गुरु ने हुक्म दिया था मुझको कह गये साँवलेशाह पीर।
निर्भय होकर बात कहूँ बन जिज्ञासुओं की पीर॥
मुझको पूजे कुछ न मिलेगा राज समझ लो वीर।
बात का समझना है गुरु धारण करना साफ कहे फकीर॥
दुख सुख यह अपना कर्म निभाया बना धीर वीर गम्भीर।
सही है या गलत है जाने वह आप ही सच्चा दस्तगीर॥

दाता के चरणों में प्रार्थना

तूने दिया काम तेरा है काम मेरा नहीं कुछ भी।
बुलबुला हूँ एक चेतन का मिट गई मैं और मनी॥
न करता काम बोझ सर रहता थी मेरे लिए मजबूरी।
अब दया करो बख्शो, स्वामी चरण हजूरी॥

शब्द-पाठ

परमसन्त
हजूर मानव दयाल जी महाराज
लालरू - 8.5.1986

आया गुरु दरबार मैं, मेरे सतगुरु साईं।
बल पौरुष से हीन भया हूँ, बुद्धी का लाचार मैं।
ज्ञान भक्ति नहिं कुछ बन आवे, कर्म का निपट गँवार मैं।
परमारथ स्वारथ दोउ खोये, भर्म रहा संसार मैं।
कैसे करूँ उपाय न सूझे, दान धर्म व्यवहार मैं।
कायर सम सबको तज डाला, कुल कुटुम्ब परिवार मैं।
घर नहिं चैन न बन में शान्ति, घूमा बस्ती उजाड़ मैं।
राधास्वामी धाम की ओर दृष्टि गई, आय पड़ा गुरुद्वार मैं।

वेदान्तसिद्धान्तगोचरम् तमोचरम्।
गोविन्दम् परमानन्दम् सद्गुरुम् प्रणतोऽस्म्यहम्॥
मानवधर्मस्य धातारं, दाता दयालस्य प्रियतमम्।
सन्धर्मस्य गोप्तारं, फकीरं वन्दे जगद्गुरुम्॥

राधास्वामी!

मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप, सत्संगी भाइयों और बहनों! आज के सत्संग में संक्षेप में आपको सन्तमत का अनुभव-ज्ञान दूँगा।

सन्तमत भक्ति मार्ग है, पराभक्ति मार्ग है और कोई नई चीज नहीं है। भक्ति मार्ग अति प्राचीन वेदों-उपनिषदों के काल से चला आ रहा है। अन्तर यह है कि सन्तमत की भक्ति को नाम की भक्ति कहते हैं। भक्ति में तीन चीज़ें आवश्यक हैं। प्रथम तो इष्ट, लक्ष्य या आदर्श जिसको प्यार किया जाता है। वैसे तो सभी लोग ईश्वर-ईश्वर कहते हैं, लेकिन ईश्वर है क्या? सतगुरु मनुष्य रूप में साक्षात् ईश्वर और परमतत्त्व का अवतार है। ईश्वर मनुष्य के रूप में है। सन्तमत या गुरुमत सनातन धर्म का मेरुदण्ड, सुमेरु, रीढ़ की हड्डी है- ओम् भूः भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम्, जो नीचे से ऊपर को गई है। पर जिसे इष्ट धारण किया जाये उसका कोई रूप, आकार होना परमावश्यक है। चाहे आप राम को इष्ट मानें, कृष्ण को मानें, शंकर को मानें, या जीवित गुरु को इष्ट मानें। जब तक रूपधारी इष्ट नहीं होगा, भक्ति किसकी की जायेगी? भक्ति में प्रेम है, भक्ति रूपधारी इष्ट की जाती है। अतः पहले इष्ट धारण करना नितान्त आवश्यक है। उसी इष्ट का रात-दिन सुमिरन, उसके नाम का अजपा जाप, उसके स्वरूप का ध्यान करना जरूरी है। लेकिन यदि आप उस इष्ट को केवल शरीर या मनुष्य मानोगे तब आपकी

भक्ति निम्न कोटि की और अधूरी भक्ति होगी।

लोग मन्दिरों में जाते हैं, प्रसाद चढ़ाते हैं, कथा-कीर्तन करते हैं। यह भी भक्ति है। इस भक्ति से केवल थोड़ी देर को दिल की तसल्ली हो जाती है। पर ऐसे भक्त बिरले होते हैं जो इष्ट का सुमिरन-ध्यान-भजन करते-करते साक्षात्कार की अवस्था को पहुँच जाते हैं और इष्ट को प्रकट कर लेते हैं। यह अवस्था तब आती है जब भक्त इष्ट के नाम को अपने घट में रचा लेता है। मेरे पास इसकी कई मिसालें हैं। सन् 1942 की बात है जब मैं एक गर्ल्स कॉलेज में पढ़ाता था। रामप्यारी नाम की एक छात्रा के पिता भोलाराम जी शिवभक्त थे। एक दिन वे मेरे पास आये और आपबीती घटना सुनाई। नजीबाबाद में वे पी.डब्ल्यू.आई. के पद पर काम करते थे। एक दिन जब वे अपने घर में भगवान् शंकर के ध्यान में लीन थे, उनके स्टेशन से लगभग 20 मील दूर एक मालगाड़ी दुर्घटनाग्रस्त हो गई। वहाँ से Call-boy मैसिज (Message) लेकर आया। उनकी पत्नी ने मैसिज लेकर रख दिया और दूसरी ट्रेन 3 घण्टे बाद जाती थी। अब भोलाराम बड़े घबराये और 5 घण्टे विलम्ब से जब दुर्घटना स्थल पर पहुँचे तब तक उनके तमाम उच्च अधिकारी वहाँ पहुँच चुके थे और सारा सामान तथा माल के डिब्बे उठाये जा चुके थे। अब चीफ इंजीनीयर ने भोलाराम जी को बुला कर पूछा, 'भाई तुम तो यहाँ सब से पहले

पहुँचे; बताओ दुर्घटना का क्या कारण है?' भोलाराम जी बोले, साहब, मैं तो अभी-अभी चला आ रहा हूँ, मैं क्या बता सकता हूँ। चीफ इंजीनीयर बोला, भोलाराम कई घण्टे से तो मैं तुम्हें खुद देख रहा हूँ कि तुम यहाँ मौजूद हो और मजदूरों से काम करा रहे हो। मजदूरों ने भी कहा, हाँ, सरकार, आप तो सुबह से ही यहाँ हम लोगों से काम ले रहे हो, फिर आप अपने आपको गैरहाजिर क्यों बता रहे हो? भोलाराम विचार में डूब गया।

बात यह है कि जब भक्त इष्ट का ध्यान करते हुए नाम में रच जाता है तो सकाम भक्ति निष्काम भक्ति में बदल जाती है। जब इष्ट के प्रति प्रेम अथाह हो जाता है तब भक्त शरीर, मन और आत्मा से परे चला जाता है। इष्ट नाम और इष्ट का प्रेम। प्रेम के अनेक रूप हैं। पिता-पुत्र का प्रेम, भाई-भाई का प्रेम, स्वामी-सेवक का प्रेम, मित्र-मित्र का प्रेम, लेकिन जो प्रेम सतगुरु-शिष्य का होता है वह सारी मंजिलें पार करके ऐसी अवस्था को पहुँच जाता है जहाँ प्रीतम और प्रेमी या भगवान् और भक्त एक हो जाते हैं। नाम की भक्ति में नामी स्वयं परमतत्त्व होता है। भक्त या शिष्य अपने इष्ट को मनुष्य शरीर न मान कर उसे परमतत्त्व मानता है। और है भी वह परमतत्त्व ही; आप भी परमतत्त्व हो। परमतत्त्व मान कर पूजने का प्रभाव यह होता है कि पुजारी स्वयं भी परमतत्त्व हो जाता है। यह सन्तमन्त, या गुरुमत या नाम की भक्ति का मार्ग है और यह आरम्भ से ही चला

आ रहा है। योगों में कर्म-योग, ज्ञान-योग और भक्ति-योग विशेष है। इनका उपदेश गीता में भी है।

ज्ञान-योग में हृदय में यह बोध हो जाता है कि परमतत्त्व क्या है और परिवर्तनशील तत्त्व क्या है। शरीर, मन और आत्मा अस्थायी और क्षणभंगुर हैं। परमतत्त्व स्थायी और अविनाशी है। ये मेरे और आप सब के अन्दर हैं। उसका कोई नाम दे दो। कोई उसे शब्द स्वरूप कहते हैं। सन्त कहें तुम शब्दरूप हो और अशब्द गति सोई। कोई नहीं कह सकता कि उस अविनाशी तत्त्व का निज नाम क्या है लेकिन वह अविनाशी परमतत्त्व है जरूर और निस्सन्देह है। उसी परमतत्त्व का ज्ञान देने के लिए सन्त सतगुरु जीवित-जागृत रूप में प्रकट हो कर जीवों को चिताता है। सतगुरु के साथ प्रेम करने से आपके घर के अन्दर वह परमतत्त्व जागृत हो जाता है। सन्तमत जो पराभक्ति या नाम की भक्ति का मार्ग है, इसमें एक ही शर्त है, और किसी लम्बी-चौड़ी व्याख्या की जरूरत नहीं है, न किसी पंडित-पुरोहित को बुला कर नवग्रह का पूजन, जाप आदि कराने की जरूरत है। सच्चे प्रेम और भक्ति पूर्वक गुरु का सत्संग करने से, गुरु की दया से यह ज्ञान हो जाता है कि शरीर हमारा है, इससे हम सुख-दुख भोगते हैं, पर यह हमारा असली रूप नहीं है। मन हमारा है, मन से हम सुख-दुख का बोध-भान करते हैं, पर हम मन नहीं हैं। आत्मा हमारा है, आत्मा से हम आनन्द भोगते हैं, पर हम आनन्द

नहीं हैं। और जब हमें यह सच्चा ज्ञान हो जाता है कि हमारा असली रूप अविनाशी है जो शरीर, मन, आत्मा से परे है, तब शरीर, मन और आत्मा के स्तर पर जो सुख-दुख आते-जाते रहते हैं, उनका कोई असर नहीं होता। प्रथम तो जब मन मालिक में लगा हुआ होता है तो दुख सुख का प्रभाव होता ही नहीं। शरीर, मन और आत्मा अपने आप स्वस्थ हो जाते हैं:-

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।

बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्।

(गीता)

भगवान् कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि व्यवसायात्मिका बुद्धि जो निकम्मा बैठा है उसका मन तो कभी मालिक की तरफ ला नहीं सकता। अब सदा काम करो और जो भी व्यवसाय करते हो, उसे मन लगा कर करो और मालिक को दिल से याद करते रहो।

जो सच्चाई के साथ व्यवसाय में लगा हुआ नहीं है, वह कभी राम को पूजता है, तो कभी कृष्ण को, कभी देवों को तो कभी हनुमान को। उसकी शक्ति बिखर जाती है। लेकिन जो सतगुरु की पूजा में लगा हुआ है उसका चित्त एकाग्र होता है, क्योंकि सतगुरु तो एक है। गुरु अनेक नहीं होता:-

गुरु एक अनादि अनन्त महा,

पद-कमल में आन में शरन गहा।

ज्ञान का होना तो बहुत ऊँची चीज़ है, ज्ञान की आपको जरूरत नहीं है, और ना ही उस भक्ति की आपको जरूरत है जिसमें हनुमान की तरह पहाड़ उठाना पड़े। गुरु-भक्ति में आपको किसी प्रकार के कर्मकाण्ड, कठिनाई आदि की जरूरत नहीं है। गुरु को परमतत्त्व मानकर उसकी भक्ति करना ही महान कल्याणकारी है। इसमें केवल अपने आपको गुरु के समर्पित कर देना है, गुरु के सामने नतमस्तक हो जाना है, झुक जाना है। झुकने मात्र से सब कुछ मिल जाता है। झुकने का मतलब अपने अहंकार को त्यागना है:-

दिल के आइने में है तसवीरें यार,

जब ज़रा गर्दन झुकाई देख ली।

मालिक तो हर समय तुम्हारे दिल के अन्दर बैठा हुआ है। जरा अहंकार हटाया कि मालिक का दर्शन साक्षात् हो गया। मैं तो मालिक के ध्यान में अपने अन्दर चला जाता हूँ। दाता दयाल के इस शब्द में सन्तमत का राज़ छिपा हुआ है:-

आया गुरु दरबार मैं तेरे सतगुरु साईं।

यह दाता दयाल जी महाराज का शब्द है जो परम दयाल जी महाराज के गुरु थे, जो स्वंय गौतम बुद्ध थे, नारायण थे, परमतत्त्व थे और आगे चल करके दाता दयाल के रूप में अवतार लिया। वे दाता

दयाल महाराज स्वयं कह रहे हैं कि जब परमतत्त्व मनुष्य के चोले में आता है तो उसे भी गुरु धारण करना पड़ता है। राम ने वसिष्ठ को गुरु धारण किया, कृष्ण ने व्यास को गुरु धारण किया। गुरु धारण करना अनिवार्य है गुरु की महिमा अपरम्पार है।

हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर।

अगर हरि अर्थात् भगवान् रूठ जाये तो गुरु आपकी रक्षा करता है, किन्तु गुरु रूठ जाये तो कोई आपको बचाने वाला नहीं है। पर गुरु परमदयाल है, वह कभी रूठेगा ही नहीं। गुरु की जात से कभी आपका अहित हो ही नहीं सकता। उनका प्यार, उनकी दया अहेतुकी और बिलकुल बेग़रज होती है। गुरु के अस्तित्व से अपार दया की धार उमड़ती रहती है। यही दाता दयाल जी की हालत थी और यही परमदयाल जी की हालत थी:-

साईं के दरबार में, कमी वस्तु की नाहिं,
बन्दा मौज न पावई, चूक चाकरी माहिं।

अगर आप मालिक के दरबार में आये हैं तो दुनिया की ऐसी कोई चीज़ नहीं जो नहीं मिल सकती। शर्त यह है कि आप गुरु को स्वामी-मालिक मानो। दाता दयाल जी महाराज या परमदयाल जी महाराज ने गुरु को मालिके-कुल-स्वामी माना। लेकिन आप सन्देह करते रहते हैं। अरे अपनी सारी चिन्ताएं गुरु को अर्पित कर

दो। लेकिन आप चिन्ताएं भी तो नहीं देते। यह आपके अन्दर कमी है- शारीरिक कमी, मानसिक कमी और आत्मिक कमी। शरीर से अस्वस्थ, मन से चिन्ताग्रस्त और आत्मा से अज्ञानी- ये तीन ताप हैं जो इन्सान की कमी का कारण है। तुम्हारे और मालिक के बीच अहंकार का एक झीना पर्दा पड़ा हुआ है इसीलिए तुम सतगुरु को मनुष्य माने बैठे हुए हो:-

साईं के दरबार में, कमी वस्तु की नाहिं,
बन्दा मौज न पावई, चूक चाकरी माहिं।

बन्दा कौन है? जो बन्धा हुआ है शरीर, मन और आत्मा के बन्धनों में। अगर दुनिया की बातों को गुरु के दरबार में ले जाते हो तो यह तुम्हारी भूल है, गलती है। 'चूक चाकरी माहिं' का मतलब सेवा करना अर्थात् झुकना। कहीं न कहीं आप में कोई कमी है जिसके कारण आपका काम नहीं बन रहा है। दाता दयाल कितने अगाध विद्वान् थे, कितने महान् लेखक थे, हजारों पुस्तकें लिख डालीं संसार के तमाम धर्मों पर। सनातन धर्म, वेद, उपनिषद्, गीता, रामायण, बौद्ध, जैन, आर्य समाज, सिख, इस्लाम, ईसाई सभी धर्मों का ज्ञान था उन्हें। पर अन्त में आकर गुरु के दरबार में झुक गये तब वे पूर्ण हो गये:-

आया गुरु दरबार मैं तेरे सतगुरु साईं।

सतगुरु के दरबार में आने के बाद किसी और की जरूरत नहीं रहती। लेकिन मैं देखता हूँ कि कितने अभ्यास करने वाले रीति-रिवाजों में बुरी तरह फँस गये। ठीक है, रीति-रिवाजों में भी वैज्ञानिकता है। शव की अस्थियों को हरिद्वार ले जाकर गंगा में डालते हैं। गंगा के जल में वैज्ञानिक असर है, वर्षों तक उसमें कीड़े नहीं पड़ सकते। लेकिन गंगा को छोड़कर लोग व्यास में डालते हैं। आये थे दयाल मत में, पर महाकाल मत बना दिया। जब गुरु के दरबार में आ गये तो फिर किसी चीज़ की जरूरत नहीं। जरूरत केवल इतनी है कि आपके और मालिक के बीच जो झीना पर्दा पड़ा है, उस पर्दे को हटाया जाए। वह पर्दा है 'मैं- तू' का अहंकार का। दाता दयाल फरमाते हैं:-

पहचान ले अपने को तो इन्सान खुदा है,
जाहिर में गो है ख़ाक मगर खाक नहीं है।
जलवों की ख़ता क्या जो दिखाई नहीं देते,
खुद देखने वालों की नज़र पाक नहीं है॥

मालिक तुम्हारे अन्दर है। भूः भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यम् सहस्रदल कमल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न, भँवरगुफा, सत् अलख, अगम, अनामी दयाल राधास्वामी सब तुम्हारे घट के अन्दर ही है। अफसोस कि लोग 20-20, 40-40 साल से नाम, पंच नाम जप रहे हैं मगर उन्हें पता नहीं चला कि मालिक के न

मिलने का कारण क्या है? कारण यही है कि बीच का पर्दा हटाया नहीं गया। मन साफ नहीं किया गया। नजर पाक नहीं हुई। नजर पाक कैसे होती है? केवल सतगुरु के दरबार में आकर शरणागत हो जाने से उसका सत्संग प्रेम और ध्यान से सुनने और मन में गुनने से आपका अनुभव जाग उठता है। अगर आपका पर्दा नहीं हटा तो आप सत्गुरु साईं के दरबार में अभी आए ही नहीं। सतगुरु, सत्संग, सतनाम- सब सत् है। यह जरूरी नहीं कि अभ्यास में आपको वे सभी दृश्य दिखाई दें जो कि हिदायतनामे में लिखे हुए हैं। सतगुरु आपको बन्द डिब्बे में भी ले जा सकता है। कैसे? आप अम्बाला से चले दिल्ली के लिए। रास्ते में सहारनपुर आयेगा, ग़ाजियाबाद आयेगा, लोग सहारनपुर स्टेशन पर उतर कर छोले-भटूरे खाएँगे, गाजियाबाद में समोसे खाएँगे, कुछ छूट भी जायेंगे और आप खिड़की बन्द रखते हैं, पर गाड़ी जब दिल्ली पहुँचेगी तो आप भी तो बन्द डिब्बे में दिल्ली पहुँच जाओगे:-

बल पौरुष से हीन भया हूं,
बुद्धी का लाचार मैं मेरे सतगुरु साईं।

लोग अपनी बुद्धि लगाते हैं, तर्क करते हैं। मैं कहता हूँ आप अपनी सारी चिन्ताएँ मुझे दे दो, आपकी सारी जिम्मेदारी मेरी है। पर लोग डरते हैं, तर्क करने लगते हैं कि क्या पता गुरु की बात से फायदा हो कि न हो। बुद्धि रास्ते की रुकावट है। बटाले में राजन

नाम का एक भला लड़का है। डा. चन्द्र नागी जो मेरा परमभक्त है, का वह मित्र है। डा. चन्द्र सच्चा गुरुमुख है, अपने विश्वास से औरों को भी दृढ़ विश्वास करा देता है। राजन वहाँ अपनी नानी के घर रहता है। ननिहास बहुत धनी हैं, पर कोई लड़का नहीं, केवल राजन की दो पुत्रियाँ हैं। जब राजन की पत्नी तीसरी बार गर्भवती हुई तो उसने किसी साधु से परामर्श किया। साधु ने कहा, लड़का होगा। राजन ने किसी डाक्टर से टेस्ट करवाया तो डाक्टर ने बताया कि लड़की है। डा. नागी राजन को मेरे पास लाया। कहने लगा, इसे प्रसाद दे दो कि लड़का हो जाए। मैंने प्रसाद तो दे दिया। पर बच्चा होने से 15-20 दिन पहले मुझे समाधि में ध्यान आया कि उसके लड़की होगी। तो मैंने उसे स्वाभाविक ही लिख दिया- 'लड़की होगी, घबराना मत, उसे स्वीकार करना। प्रसाद लेना या आशीर्वाद लेना आसाम काम नहीं है और हर एक को हम आशीर्वाद नहीं देते। क्योंकि मान लो मैंने आशीर्वाद दे दिया कि भाई नानक चन्द, तुम्हारा यह काम हो जायेगा। लेकिन अगर नानक चन्द ने अपना विचार बदल दिया तो उसका नुकसान हो जायेगा। इसलिए गुरु के विचार की धारा और शिष्य के विचार की धारा मिली हुई होनी चाहिए। तो जब मेरी चिट्ठी राजन को मिली और उसने पढ़ा, और उसके घर लड़की पैदा हुई तो वह घबराया नहीं क्योंकि मैंने उसे लिख दिया था। अब उसकी तीन लड़कियाँ हो गई। वह मेरे पास आया और

बोला, महाराज मैं तो आपको मानता हूँ। मुझे खुशी है कि मैं आपके दरबार में आ गया। अब मुझे लड़का हो या न हो, मुझे कोई चिन्ता नहीं। मैंने कहा, अब तुझे लड़का जरूर होगा क्योंकि तू गुरु दरबार में आ चुका है। मैंने उसे प्रसाद दिया और उसे लड़का हुआ। तो जब अपना बल पौरुष त्याग कर एक बार अपने आपको सतगुरु के हवाले कर दें तो सतगुरु आपको ऊपर उठा लेगा। किश्ती तब तैरेगी जब किश्ती खुदा पे छोड़ दो, लंगर को तोड़ दो। दाता दयाल जी कह रहे हैं:-

बल पौरुष से हीन भया हूं,
बुद्धी का लाचार मैं मेरे सतगुरु साईं।

गुरु के सामने अपनी बुद्धि नहीं रखनी चाहिए:-

ज्ञान भक्ति नहिं कुछ बन आवे,
कर्म का निपट गँवार मैं मेरे सत्तगुरु साईं।

ज्ञान जब भक्ति से उत्पन्न होता है, तब वह बहुत उत्तम और कल्याणमय है। यों तो सभी लोग पढ़ते और समझते हैं कि परात्पर ब्रह्म जगत् से अलग है, न्यारा है। लेकिन जब तक सत्तगुरु के सत्संग में प्रेमपूर्वक उसका साक्षात् अनुभव नहीं होता उस ज्ञान का लाभ नहीं पहुँच सकता। दाता दयाल जी तो कह रहे हैं कि ज्ञान या भक्ति कुछ भी नहीं मैं पा सकता था, जब तक कि गुरु के दरबार में

नहीं पहुँचा। जो लोग पोथी-ग्रन्थ पढ़कर समझ बैठते हैं कि उन्हें ज्ञान हो गया, वे सब वाचक ज्ञानी होते हैं। वाचक ज्ञानी कौन है? जो कहता है सब कुछ ब्रह्म है, मैं ब्रह्म हूँ, अहं ब्रह्मास्मि, लेकिन व्यवहार में वह लोगों से नफ़रत करता है। सन्त स्वभावत: अच्छाई-बुराई से ऊपर होता है। पर वाचक ज्ञानी इनसे ऊपर नहीं उठ सकता।

ज्ञान मार्ग गीता में पढ़ लेने से कुछ लाभ नहीं होता। गीता पढ़ने का लाभ भी तभी होगा जब किसी सत्पुरुष के सत्संग में जाओगे। वह बताएगा कि सच्ची भक्ति और ज्ञान क्या है। और जब सतगुरु भेद बता देगा तब तुम्हारी आँखें खुली जायेंगी कि यही गीता में लिखा है और इसका वास्तविक अर्थ यह है। इसीलिए सन्तमत में जीवित गुरु की महिमा है। इसीलिए एक गुरु दूसरे जीवित गुरु को सार-भेद हृदयंगम करा जाता है ताकि आगे आने वाली पीढ़ी को वह समझाए जिससे कि जीव के संशय-भ्रम मिट जाएँ। जब तक जीव के सारे संशय-भ्रम पूरी तरह मिट नहीं जाते तब तक वह अध्यात्म में आगे नहीं जा सकता। जीवित गुरु की संस्था और महिमा आदि काल से चली आ रही है:-

ज्ञान भक्ति कुछ बन नहिं आवे,
कर्म का निपट गँवार मैं तेरे सतगुरु साईं।

सतगुरु जीव की प्रकृति और परिस्थितियों के मुताबिक

उससे कर्म करा कर उसके सारे कर्म कटवा देता है। लेकिन जब तक जीव अपने मन के अनुसार कर्म करता है तब तक उसके कर्म नहीं कटते। गुरु के सत्संग से भक्ति, ज्ञान और मुक्ति सब कुछ मिलती है लेकिन भक्ति श्रेयस्कर है। इसीलिए कहा गया है:-

मुक्ति की नहिं चाह मन में, भक्ति प्यारी लाग,
राधास्वामी की दया से भाग्य पूरन जाग।

राधास्वामी किसी व्यक्ति या सम्प्रदाय का नाम नहीं है शिष्य राधा है और गुरु स्वामी है। शिष्य गुरु से मिल कर राधास्वामी की हालत में पहुँच जाता है:-

परमारथ स्वारथ दोउ खोये,
भरम रहाल संसार मैं तेरे सतगुरु साई।

जिनका सम्पर्क गुरु से नहीं होता वे जीव संसार में भटक जाते हैं। रस्मी तौर पर कहीं से नाम ले लेते हैं और फिर भी जीवन में दुखी रहते हैं। उन्हें कुछ पता नहीं कि ज्योति निरंजन क्या है? ओंकार क्या है? संस्कार क्या है? सोहं देश क्या है और सतलोक क्या है? केवल तोतारटंत नाम रचने से कोई लाभ नहीं होता बल्कि ऐसे लोग ही जीवन में दुखी रहते हैं। जिनको गुरु से सच्चा ज्ञान मिल जाता है वे आगे जाते हैं। भेड़चाल चलने से परमार्थ नहीं मिलता। परमार्थ के लिए सतगुरु का सत्संग अनिवार्य है। बिना सत्संग के

परमार्थ कौन कहे स्वार्थ भी नहीं सिद्ध होता। अगर आपको स्वार्थ ही साधना है तो कोई एक इष्ट धारण कर लो, गुरु या किसी देवी-देवता या पत्थर की मूर्ति को ही इष्ट मान लो। उसे पूर्ण मान कर उसकी मूर्ति अपने घट में बनाओ। उससे जो माँगोगे मिलेगा। इष्टहीन को न स्वार्थ ही मिला न परमार्थ।

न खुदा ही मिला, न वसाले सनम,
न इधर के हुए, न उधर के हुए।

धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का। सतगुरु की शरण में अपने आपको समर्पित कर देने से परमार्थ, स्वार्थ दोनों ही बन जाते हैं:-

कैसे करूँ उपाय न सूझे,
दान धर्म व्यवहार मैं मेरे सतगुरु स्वामी।

लोग हजारों की संख्या में एक साथ नाम ले लेते हैं। और जब घर आते हैं, कठिनाइयों तथा समस्याओं का सामना होता है, उससे बचने-उबरने का उपाय तो मालूम नहीं होता और सतगुरु के दर्शन तक नहीं हो पाते, उपाय पूछने की तो बात ही क्या है। जब तक सतगुरु के सत्संग में मनुष्य को जीवन व्यतीत करने का उपाय (राज) नहीं मिलता, तब तक जीवन में सफलता और शान्ति नहीं मिल सकती। 20-20, 25-25 वर्षों से नाम लिया हुआ है पर

अध्यात्म में कोरे के कोरे, जीवन कष्टों और चिन्ताओं से भरा रहता है। गुरु से युक्ति पूछने पर कोई उत्तर नहीं, समाधन नहीं मिलता।

सन्तमत आपको न कर्म करने से रोकता है, न धर्म करने से रोकता है, न धर्म से, न व्यवहार से। वह आपको इनका सही-सच्चा रूप बतला कर जीवन को सुख और शान्ति पूर्वक व्यतीत करने की विधि और युक्ति बतलाता है। धर्मशाला या हस्पताल बनवाना परमार्थ नहीं है। दान देने से मन शुद्ध-पवित्र होता है। दान राजसिक और तामसिक होता है, पर सात्त्विक दान उत्तम होता है। इसमें कोई स्वार्थ नहीं होता। सात्त्विक दान दाहिने हाथ से देते हैं तो बाएँ हाथ को पता भी नहीं लगना चाहिए। देना जरूरी है। गुरु के दरबार में खाली हाथ नहीं जाना चाहिए। एक फूल ही लेकर जाओ उससे गुरु की रेडियेशन मिलती है। जिस भाव से दोगे, वही लौट कर तुम्हें मिलेगा।

धर्म क्या है ? अपने मन से, वचन से और कर्म से किसी को हानि पहुँचाने की पहल न करना ही धर्म है। इसके लिए मन में सदा शिवसंकल्प रखना चाहिए।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई,
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।

जब आप गुरु के दरबार में जाते हैं तो आपके लोक-

परलोक दोनों ही बन जाता हैं:-

कायर सम सबको तज डाला,

कुल कुटुम्ब परिवार मैं मेरे सतगुरु साईं।

जो लोग सन्यासवाद को मानते हैं वे संसार त्याग करने की बात करते हैं लेकिन संसार त्यागने से संसार नहीं छूटता। सन्तमत संसार त्यागने को नहीं कहता। घर में रहो, पिता, पुत्र, भाई बनकर रहो। सबसे प्यार करो लेकिन किसी के मोह में न फँसो। यह देखो कि असल में तुम कौन हो? परमतत्त्व मालिक एक है। जैसे कि आप किसी के पुत्र, किसी के भाई, किसी के पिता, किसी के मित्र, किसी के अफसर और किसी के मातहत होते हुए भी आप तो एक हो। उस एक को पकड़ो। एक ही को साधो, एक मूल को सींचो, पूरा वृक्ष हरा-भरा हो उठेगा:-

एक ही साधे सब सधे, सब साधे सब जाय,

माली सींचे मूल को, ऋतु आए फल खाय।

एक परमतत्त्व की शरण में आ जाओ, सब कुछ मिल जायेगा। कितनी सरल और छोटी सी बात है। किन्तु इसी एक बात को न समझने से सारे काम बिगड़ जाते हैं और इसको ही समझ कर साधने से सारे काम बन जाते है।

न किसी को छोड़ने की जरूरत है, न किसी में फँसने की

जरूरत है। विवेक-विचार के साथ, प्रेमपूर्वक अपना कर्त्तव्य निभाते हुए सतगुरु की शरणागत हो जाने में ही सच्चा कल्याण है लेकिन ऐसा भी नहीं होना चाहिए कि गुरु को शरीर या मनुष्य मानकर उससे प्यार करे। ऐसे लोग गुरु का चोला छूटने पर खुदकुशी कर लेते हैं। गुरु तो न कभी पैदा हुआ, न मरता है। गुरु को परमतत्त्व मानकर प्यार करने से आप भी उसका ही रूप हो जाते हो।

घर नहिं चैन न वन में शांति, घूमा बस्ती उजाड़।

घर छोड़कर सन्यासी हो जाने से शांति नहीं मिलती। वन में जाकर कुटी लगा ली, चेले बना लिये। फिर कुटी की मोह-माया में फँस गये, गुरु बन जाने का अहंकार आ गया। न घर के रहे, न घाट के। इसकी कोई जरूरत नहीं है। घर में रहते हुए, अपने मात-पिता की सेवा करते हुए, भाई-बहन के प्रति कर्त्तव्य निभाते हुए, पत्नी और बच्चों से प्रेम का व्यवहार करते हुए, मालिक में ध्यान लगाना ही सच्ची भक्ति और परमार्थ है। जिसे घर में शान्ति नहीं मिली और कहीं भी शान्ति नहीं मिल सकती।

राधास्वामी धाम की ओर दृष्टि गई, आय पड़ा गुरु द्वार।

जो प्राणिमात्र में मालिक का रूप देखता है, सबसे प्रेम का व्यवहार करता है, उसकी ही सुरत ऊपर को जा सकती है और ध्यान-समाधि में तरक्की हो सकती है। जब सब से प्यार करते हुए

किसी में फँसोगे नहीं तब तुम धारा से राधा बनकर स्वामी से मिल जाओगे और अपने अविनाशी रूप को प्राप्त हो जाओगे:-

बैठक स्वामी अद्‌भुती, राधा निरखनहार,

और न कोई लख सके, शोभा अगम अपार।

यह तभी सम्भव होगा जब आप गुरु दरबार में आकर प्रेम के साथ गुरु का सत्संग सुनोगे और पूर्णरूप से गुरु के शरणागत हो जाओगे। इन शब्दों के साथ मैं आप सबको सद्‌भावना देता हूँ।

सबको राधास्वामी।

शोक संदेश

बड़े दुखी हृदय से सूचित किया जाता है कि हमारे माननीय ट्रस्टी श्री अनुराग सूद जी की माता जी श्रीमती संतोष सूद 9 मई 2020 को 91 वर्ष की आयु में प्रभु चरणों में विलीन हो गईं।

श्रीमती सन्तोष सूद जी के पति श्री घनश्याम सूद (सेवानिवृत जिला शिक्षाधिकारी) के युवावस्था में निधन उपरांत उन्होंने एक अदम्य साहस के साथ अपने परिवार का पालन-पोषण किया व अपने बच्चों को अच्छे संस्कार देने में हमेशा प्रयत्नशील रहीं। श्रीमती सन्तोष सूद एक धार्मिक व दानवीर महिला थीं तथा हमेशा आजीवन मानवता की सेवा को समर्पित रहीं।

श्रीमती सन्तोष सूद व उनका समस्त परिवार पिछले कई वर्षों से परमदयाल जी महाराज से प्रेरित होकर मानवता मन्दिर से जुड़े हुए हैं। ये उनके संस्कारों का ही असर है कि उनके तीनों सुपुत्र श्री नीरज कुमार (ब्रिगेडियर), श्री इन्द्रवीर (सेवानिवृत) व श्री अनुराग सूद तथा सुपुत्री श्रीमती आरती सूद मेहता उच्च पदों पर सुशोभित हैं।

मां-बाप किसी भी अवस्था में हो परन्तु उनका सिर से

साया उठ जाना बहुत दुखदायक होता है, विशेषकर बताया गया है कि माँ का कर्ज तो औलाद सात जन्म तक भी लौटा नहीं सकती। परन्तु हम ये भी जानते हैं कि हर जीव की मौत अटल है। इसलिए परमात्मा के भाणे में रहकर ही हम सबकी भलाई है।

समस्त मानवता मन्दिर परिवार की तरफ से हम दुखित परिवार के प्रति हार्दिक संवेदना प्रकट करते हुए परमदयाल पं. फकीर चन्द जी महाराज से विनती करते हैं कि श्रीमती सन्तोष सूद की आत्मा को अपने चरण कमलों में वास दें व उनके परिवार को बिछौड़ा सहन करने का बल बख्शें तथा अपनी दया, मेहर व बख्शिश बनाए रखें।

-सचिव

आभार प्रकट

निम्नलिखित सज्जनों ने मानवता मन्दिर होशियारपुर में सहयोग राशि दी है। परमपूज्य परमदयाल जी की परमकृपा इन सज्जनों व इनके परिवारों पर सदैव बनी रहे। ट्रस्ट इनके प्रति अपना आभार प्रकट करता है

-सचिव

S.No.	DONOR	Amount
1.	Vandana / Rahul Bhatnagar, USA	700000/-
2.	In Memory of Late Sh. Thakur Ram, UK.	112000/-
3.	Ravi Kant Mahesh Kumar, Mumbai	51000/-
4.	Brian Bhatti, USA	38934.52/-
5.	Dr. Sanjeev Kumar Dua, Mumbai	28002/-
6.	Jagjit / Arun Awasthi, USA	21000/-
7.	Prem Paul/ Virender Jeed, Adampur Doaba	20000/-
8.	Bhupendra Kothari, Mumbai	18000/-
9.	Harish Shah, Mumbai	18000/-
10.	Mahesh Himatramka, Mumbai	18000/-
11.	Pardeep Sawla, Mumbai	18000/-
12.	Manohar Pandit, Mumbai	18000/-
13.	Vipin Jaswante	18000/-
14.	Prakash Punjabi, Dubai	18000/-
15.	Radhe Shah, USA	18000/-
16.	Shobha Jaswante, Amaravati	18000/-
17.	Waman Rao Jaswante, Amravati	18000/-
18.	Yogesh Jaswante, Amravati	18000/-
19.	Asha Rani Saneja, Sirsa	13000/-
20.	Akshata Hiranandani, Mumbai	11111/-
21.	Mandira Kashyap, Mumbai	11000/-
22.	Prem Lata Gupta, New Delhi	15000/-
23.	Latita Mudgal, Jaipur	11000/-
24.	Dia Jayakumar Mody, Mumbai	10000/-
25.	Chander Bhushan	10000/-

26.	Vimal Kumar, Dehradun	10000/-
27.	Madan Singh, USA	10000/-
28.	Anju Sharma, Mumbai	8000/-
29.	Lakshay Gupta	7300/-
30.	Awantika, Hoshiarpur	5100/-
31.	Vijay Laxmi D/o Abhay K. Dogra, Hoshiarpur	5100/-
32.	Sham Sunder, Hoshiarpur	5100/-
33.	Ranjit K. Sharma, Hoshiarpur	5000/-
34.	Lajpat Rai Dhingra, Faridabad	5000/-
35.	Hind Auto Mobiles, Hoshiarpur	5100/-
36.	Ashok Dhingra	3100/-
37.	Balraj, Hoshiarpur	3000/-
38.	Dayal Medicos, Hoshiarpur	3000/-
39.	R.K. Bhardwaj, Ludhiana	2200/-
40.	Munni Devi, Dadri	2200/-
41.	Ashutosh Dogra, Hoshiarpur	1700/-
42.	Jagdish Prasad Srivastav, Jaunpur	1500/-
43.	Ach. Kuldeep Sharma Ji, Batala	1100/-
44.	Neelam Sharma, Hoshiarpur	1100/-
45.	Late Trishan Sharma Ji	1100/-
46.	Baba Roshan Lal	1100/-
47.	Satish Kumar, Hoshiarpur	1100/-
48.	In Memory of Late Sh. T.N. Sharma, Deharadun	1100/-
49.	Sunil Kumar Sood	1000/-
50.	Kamla Luthra, Hoshiarpur	1000/-
51.	Late Yog Raj Sharma Ji, Chandigarh	1000/-
52.	Milind Apte, Mumbai	1000/-
53.	Mohan Lal Bagga, Hoshiarpur	1000/-
54.	Padam Kumar, Suratgarh	750/-
55.	Harish Kumar, Raijada	501/-
56.	Prinku, Dadri	500/-
57.	Sadhu Singh, Gurdaspur	500/-
58.	Surinder Singh, Naya Ground	500/-
59.	S.K. Sethi, Jalandhar	500/-
60.	Marninder, Moga	500/-

61.	Prakash Rathore, Delhi	500/-
62.	Surinder Kumar, Kakkon	500/-
63.	Ashish Aery, Gurgaon	500/-
64.	Ram Dass Mali, Burdhman	500/-
65.	Sardar Studio, Adampur Doaba	500/-
66.	Iqbal Singh, Hoshairpur	500/-
67.	Gamesh C. Kaushal, Adampur Doaba	500/-
68.	K.D. Sharma, Hoshiarpur	500/-
69.	Surinder Kumar Rana, Hoshiarpur	500/-
70.	Tripta Sharma, Hoshiarpur	500/-
71.	Neeraj Sharma, Hoshiarpur	500/-
72.	Bakhshish Singh Sachdev, Hoshiarpur	500/-

सूचना

सभी दानी सज्जनों, सत्संगियों से अनुरोध है कि जो धनराशि मानवता मन्दिर, होशियारपुर में भेजना चाहते हैं, उनकी सुविधा के लिए हम **Punjab National Bank, Hoshiarpur** के दो **Account Numbers** दे रहे हैं। इच्छुक सत्संगी **Faqir Library Charitable Trust A/c No. 0206000100057805, IFSC Code-PUNB0020600** और **Manavta Mandir Hoshiarpur A/c No. 0206000100209756, IFSC Code-PUNB0020600** में जमा करवा सकते हैं। कृपया जो भी राशि जमा करवायें उसकी रसीद की एक कॉपी अपने पत्र के साथ मंदिर कार्यालय में भेज दें अथवा सूचित कर दें, ताकि दानी सज्जनों की सूची में उनका नाम प्रकाशित किया जा सके तथा रसीद भी भेजी जा सके।

सचिव,

फ़कीर लाईब्रेरी चैरिटेबल ट्रस्ट, होशियारपुर।